5 अध्याय

मौलिक अधिकार

इस अध्याय में आप सीखेंगे कि:

- मौलिक अधिकार क्या हैं और इनकी आवश्यकता तथा वर्गीकरण के बारे में जानकारी प्राप्त होगी कि इनके क्या अभिलक्षण हैं और अन्य देशों से हमारे मौलिक अधिकार कैसे बेहतर हैं।
- मौलिक अधिकारों का विस्तार किस प्रकार हो रहा है तथा हाल के वर्षों में माननीय न्यायालय ने कौन-कौन से महत्वपूर्ण निर्णय दिये हैं, उनके बारे में विशेष जानकारी प्राप्त होगी।
- हाल के वर्षों में शिक्षा और सूचना के अधिकार मिल जाने के बाद स्वास्थ्य के अधिकार की बात क्यों हो रही है।

परिचय (Introduction)

मौलिक अधिकार, वे अधिकार हैं जो किसी व्यक्ति के जीवन, स्वतंत्रता एवं अभिवृद्धि के लिए अनिवार्य है और जिन्हें राज्य के विरूद्ध न्यायपालिका का संरक्षण प्राप्त होता है। इनके अभाव में लोकतंत्र मात्र कल्पना होगा। किसी भी लोकतंत्र की असफलता इस बात पर निर्भर करती है कि देश की जनता को आमतौर पर कौन-सी नागरिक स्वतंत्रताएं प्राप्त है। वस्तुत: नागरिक स्वातंत्र्य ही मूल अधिकार है। प्रत्येक लोकतंत्र राज्य की सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए अपने नागरिक को विकास के अधिक से अधिक अवसर प्रदान करता है। प्राय: सभी लोकतंत्र इसी प्रयोजन के लिए मौलिक अधिकार की एक सूची अपने संविधान द्वारा प्रत्याभूत करके उन्हें कार्यपालिका तथा विधान मण्डल के अतिक्रमण से सुरक्षित रखते है। सिद्धांतत: मौलिक अधिकारों का अर्थ हैं परिसीमित प्रशासन और परिसीमित प्रशासन का उदेश्य है कार्यपालिका और विधानमण्डल की स्वतंत्रता अथवा सम्मिलित रूप में तानाशाही की प्रवृति पर प्रतिबंध लगाना। मौलिक अधिकार लोकतंत्र के आधार-स्तम्भ है। मूल अधिकारों से उन परिस्थितियों अथवा सुविधाओं का बोध होता है जो व्यक्ति की अंतर्निहित शक्तियों को विकसित करने और उसे अपने व्यक्तित्त्व में पूर्णता प्रदान करने के लिए सामान्य रूप से अपरिहार्य मानी जाती है।

मूल अधिकारों की मांग (Demand for Fundamental Rights)

मौलिक अधिकार का सर्वप्रथम विकास ब्रिटेन में हुआ था। ब्रिटिश सम्राट द्वारा 1215 ई. में हस्तांतरित अधिकार मूल अधिकार सम्बन्धी प्रथम लिखित दस्तावेज है। भारत में मौलिक अधिकारों की घोषणा के लिए सर्वप्रथम माँग तिलक द्वारा स्वराज बिल के तहत 1895 में की गई। 1925 में एनी बेसेंट द्वारा प्रस्तुत 'कॉमनवेल्थ आफ इंडिया बिल' में यह मांग की गई कि अंग्रेज़ों के समान भारतीयों को भी नागरिक तथा समता का अधिकार प्रदान किया जाए। 1927 में अग्रेंज़ों के मद्रास अधिवेशन में एक संकल्प पारित कर यह निर्धारित किया गया कि भारत के भावी संविधान का आधार मूल अधिकारों की घोषणा होनी चाहिए। 1928 में मोतीलाल नेहरू द्वारा प्रस्तुत की गई रिपोर्ट (नेहरू रिपोर्ट) में सभी मौलिक अधिकारों की माँग की गई। मार्च 1931 में कांग्रेस के करांची अधिवेशन तथा सितम्बर में द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में गाँधी जी द्वारा मूल अधिकारों की माँग को दोहराया गया। लेकिन उसके बावजूद 1934 में संयुक्त संसदीय समिति ने इस माँग को अस्वीकार कर दिया। फलस्वरूप, 1935 के भारत सरकार अधिनियम में मूल अधिकारों को शामिल नही किया गया । 1945 में भारत के संविधान के संबंध में सर तेज बहादुर सप्रू द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट में भारतीय संविधान में मूल अधिकारों को शामिल करने की सिफारिश

की गई। संविधान सभा के गठन की योजना प्रस्तुत करने वाले कैबिनेट मिशन द्वारा यह सुझाव दिया गया कि मूल अधिकारों तथा अल्पसंख्यकों के अधिकारों की सिफारिश करने के लिये एक समिति का गठन किया जाना चाहिऐ। फलत: संविधान सभा ने बल्लभ भाई पटेल की अध्यक्षता में परामर्श समिति का गठन किया। परामर्श समिति द्वारा 27 फरवरी,1947 को जे.बी. कृपलानी की अध्यक्षता में मौलिक अधिकारों से संबंधित एक उपसमिति गठित की गई। इसे मौलिक अधिकार समिति भी कहा जाता है। इसके सदस्य थे—मीनू मसानी, के.टी. शाह, कृष्णास्वामी अययर, के.एम. मुंशी, के.एम. पाणिक्कर, राजकुमारी अमृतकौर, हरनाम सिंह, मौलाना आजाद, अम्बेडकर, हंसा मेहता तथा सरदार पटेल। उल्लेखनीय है कि परामर्श समिति तथा उपसमिति (मौलिक अधिकार समिति) की सिफारिशों के आधार पर ही संविधान में मूल अधिकारों को शामिल किया गया।

मूल अधिकारों का वर्गीकरण

भारतीय संविधान के भाग 3 अनुच्छेद 12-35 में मूल अधिकारों को सात समूहों में वर्गीकृत किया गया था लेकिन 44वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1978 द्वारा भारतीय संविधान में से सम्पत्ति के मूल अधिकार (अनुच्छेद 31) को मूल अधिकारों के समूह में से 20 जून,1979 से निकाल दिया गया। इसी अधिनियम द्वारा संविधान के भाग-12 में एक नया अध्याय 4 जोड़कर सम्पत्ति के अधिकार के अनुच्छेद 300 (क) के अंतर्गत रखा गया है जिसमें कहा गया है कि किसी व्यक्ति को उसकी सम्पत्ति से विधि के प्राधिकार से ही वंचित किया जाएगा,अन्यथा नहीं। इस प्रकार सम्पत्ति का अधिकार मूल अधिकार न होकर देश का सामान्य कानून बन गया है। उल्लेखनीय है कि 44वें संविधान संशोधन द्वारा अनुच्छेद 19 (1)(च) के तहत 'सम्पत्ति की स्वतंत्रता' का लोप कर दिया गया है और अब अनुच्छेद 19 के अंतर्गत नागरिकों को 6 स्वतंत्रताएं (मूल अधिकारों) ही प्राप्त हैं। वर्तमान में भारतीय संविधान में निम्नलिखित मूल अधिकारों लेखबद्ध किए गए हैं:

1. समता का अधिकार (अनुच्छेद 14-18)
2. स्वतंत्रता का अधिकार (अनुच्छेद 19-22)
3. शोषण के विरुद्ध अधिकार (अनुच्छेद 23-24)
4. धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार (अनुच्छेद 25-24)
5. संस्कृति और शिक्षा संबंधी अधिकार (अनुच्छेद 29-30)
6. संवैधानिक उपचारों का अधिकार (अनुच्छेद 32)

तालिका 5.1: मूल अधिकार व सामान्य अधिकार में अंतर

मूल अधिकार	सामान्य अधिकार
• मूल अधिकार स्वयं संविधान द्वारा प्रदत्त होते हैं।	सामान्य अधिकार विधायिका द्वारा प्रदान किये जाते हैं।
• जटिल संशोधन प्रक्रिया के कारण ये प्राय: विधायिका की पहुँच से दूर ही रहते हैं।	इन्हें विधायिका कभी भी (सामान्य बहुमत द्वारा) समाप्त कर सकती है।
• ये संविधान द्वारा सुरक्षित होते हैं तथा उनके उल्लंघन की स्थिति में सीधे उच्चतम न्यायालय द्वारा उपचार प्रदान किया जाता है।	उनके उल्लंघन पर उपचार के लिये सामान्य न्यायालयों में जाना पड़ता है।
• इस अधिकार को प्राप्त कराने वाला इसका परित्याग नहीं कर सकता है।	इन अधिकारों को व्यक्ति जब चाहे त्याग सकता है।

केवल भारतीय नागरिकों को प्राप्त मूल अधिकार

कुछ मूल अधिकार ऐसे हैं, जो केवल भारतीय को ही प्राप्त हैं तथा इनका दावा विदेशी नागरिक नहीं कर सकते। ऐसे मूल अधिकार निम्नलिखित हैं:

- अनुच्छेद 15 —धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्मस्थान के आधार पर कोई विभेद भेदभाव नहीं किया जा जाएगा।
- अनुच्छेद 16 —लोक नियोजन के विषय में अवसर की समानता।
- अनुच्छेद 19 —वाक् स्वातंत्र्य आदि विषयक कुछ अधिकारों का संरक्षण।
- अनुच्छेद 29 —अल्पसंख्यक वर्गों के हितों का संरक्षण।
- अनुच्छेद 30 —शिक्षा संस्थाओं की स्थापना और प्रशासन का अल्पसंख्यक वर्गों का अधिकार।

सकारात्मक अभिव्यक्ति वाले मूल अधिकार

- अनुच्छेद 25 —अंत:करण की और धर्म के अबाध रूप से मानने, आचरण और प्रचार की स्वतंत्रता।
- अनुच्छेद 29(1) —प्रत्येक नागरिक को प्राप्त अपनी विशेष भाषा, लिपि या संस्कृति बनाए रखने का अधिकार।
- अनुच्छेद 30(1) —धार्मिक या भाषायी अल्पसंख्यकों को अपनी रूचि की शिक्षण संस्था की स्थापना व प्रशासन का अधिकार।

नकारात्मक अभिव्यक्ति वाले मूल अधिकार

- अनुच्छेद 14 —राज्य किसी व्यक्ति को विधि के समक्ष समता या समान संरक्षण से वंचित नहीं करेगा।
- अनुच्छेद 15(1) —राज्य धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर नागरिकों में विभेद नहीं करेगा।
- अनुच्छेद 16(2) —राज्य लोक नियोजन में धर्म, जाति, लिंग आदि आधारों पर नागरिकों में विभेद नहीं करेगा।

तालिका 5.2: केवल राज्य के विरुद्ध उपलब्ध मूल अधिकार

• विधि के समक्ष समता।	अनु.—14
• धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर विभेद का निषेध।	अनु.—15(1)
• लोक नियोजन में अवसर की समानता।	अनु.—16

(Continued)

• सेना या विद्या सम्मान के अतिरिक्त कोई उपाधि राज्य नहीं प्रदान करेगा।	अनु.—18(1)
• वाक् स्वातंत्र्य आदि विषयक अधिकारों का संरक्षण।	अनु.—19(1)
• प्राण और दैहिक स्वतंत्रता का संरक्षण।	अनु.—21
• कुछ दशाओं में गिरफ्तारी और निरोध से संरक्षण।	अनु.—22
• अंत:करण से धर्म मानने, आचरण करने व प्रचार की स्वतंत्रता।	अनु.—25
• धार्मिक कार्यों के प्रबंध की स्वतंत्रता।	अनु.—26
• किसी विशिष्ट धर्म की अभिवृद्धि के लिए करों से स्वतंत्रता।	अनु.—27
• कुछ शिक्षण संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा की स्वतंत्रता।	अनु.—28
• अल्पसंख्यक वर्गों के हितों का संरक्षण।	अनु.—29
• शिक्षण संस्थाओं की स्थापना व प्रशासन का अल्पसंख्यक वर्ग का अधिकार।	अनु.—30

तालिका 5.3: राज्य के साथ ही व्यक्तियों के भी विरुद्ध उपलब्ध मूलाधिकार

• धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म-स्थान के आधार पर सार्वजनिक स्थान पर प्रवेश अथवा उपयोग में विभेद का प्रतिषेध।	अनु.—15(2)
• अस्पृश्यता का अंत।	अनु.—17
• मानव के दुर्व्यापार व बेगार आदि व बलात्श्रम का निषेध	अनु.—23(1)
• कारखानों आदि में बालकों के नियोजन का प्रतिषेध।	अनु.—24

मूल अधिकारों का निलंबन या परिसीमन

मूल अधिकारों का निलंबन या परिसीमन किया जा सकता है। मूल अधिकार पर युक्तियुक्त निर्बंधन अधिरोपित किये जा सकते हैं जिनके संबंध में अनुच्छेद 19 में प्रावधान किया गया हैं। अनुच्छेद 15क तथा 15 के अनुसार सामाजिक उद्देश्यों के प्रवर्तन जैसे महिलाओं बच्चों तथा पिछड़ी जातियों के कल्याण के लिए राज्य मूल अधिकारों में हस्तक्षेप कर सकता है। अनुच्छेद 34 के अनुसार जब किसी क्षेत्र में सेना विधि प्रर्वतन में हो तब संसद विधि द्वारा मूल धिकारों पर निर्बंधन अधिरापित कर सकती है। जब देश अनुच्छेद 352 के अधीन राष्ट्रीय आपात लागू किया गया हो तब अनुच्छेद 19 द्वारा प्रदत्त मूल अधिकारों का स्वत: निलम्बन हो जाता है और राष्ट्रपति अधिसूचना जारी कर अन्य मूल अधिकारों को समाप्त कर सकता है लेकिन अनुच्छेद 20 तथा अनुच्छेद 21 द्वारा प्रदत्त अधिकार कभी भी समाप्त नहीं किये जा सकते। संसद संविधान मे संशोधन करके मूल अधिकारों को निलम्बित कर सकती है लेकिन ऐसा करते समय वह संविधान के मूल ढांचे को नष्ट नहीं कर सकती हैं।

मौलिक अधिकारों की विशेषताएँ

भारतीय संविधान द्वारा अपनाए गए मौलिक अधिकार की अपनी विशेषताएँ हैं:

- **अत्यधिक विस्तृत मौलिक अधिकार**—भारतीय संविधान में वर्णित मौलिक अधिकार विश्व के अन्य किसी भी संविधान में वर्णित मौलिक अधिकार से विस्तृत तथा पेचीदा है। एक सम्पूर्ण अध्याय (भाग-3 अनुच्छेद 12 से 35 तक) में मौलिक अधिकारों का वर्णन मिलता है।
- कुछ अधिकार सभी लोगों को प्राप्त हैं—भारत में जो लोग रह रहे हैं, चाहे वह भारत के मूल नागरिक हैं या नहीं कुछ अधिकार दिए गये हैं जैसे—जीवन की सुरक्षा, धार्मिक स्वतंत्रता, शोषण के विरुद्ध अधिकार आदि।
- **कुछ अधिकार केवल भारतीयों को ही प्राप्त हैं**—जैसे सरकारी पदों पर नियुक्ति के लिए अवसरों की समानता, भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, सभा सम्मेलन और समुदायों के निर्माण की स्वतंत्रता, देश के किसी भी भाग में बस जाने की स्वतंत्रता, देश के एक भाग से दूसरे भाग में आने-जाने की स्वतंत्रता। विदेशियों को इस प्रकार की स्वतंत्रताएं नहीं दी गई हैं।
- **अधिकार असीमित नहीं हैं**—देश की एकता, अखण्डता और राष्ट्र की प्रगति के लिए अधिकारों पर उचित प्रतिबंध लगाने की व्यवस्था है। किसी भी व्यक्ति को मनमाने ढंग से काम करने की अनुमति नहीं दी जा सकती। ऐसे सभा सम्मेलनों पर सरकार प्रतिबंध लगा सकती है, जिससे देश की जनता में सांप्रदायिक भावना की वृद्धि होती है तथा जिससे देश की शांति व्यवस्था प्रभावित होती है। ऐसे समाचार पत्रों पर प्रतिबंध लगाया जा सकता है जो देश की एकता और अखण्डता के विरुद्ध है।
- **सरकार कोई ऐसा कानून नहीं बना सकती जिससे मौलिक अधिकारों का हनन होता हो**—संविधान यह घोषणा करता है कि 'राज्य कोई ऐसा कानून नहीं बनायेगा जिससे मूल अधिकार सीमित हों'। इतना ही नहीं नगर निगम, नगर पालिका, जिला बोर्ड और पंचायतें भी 'राज्य' की ही सत्ता का बोध कराती हैं। दूसरे शब्दों में विधान मण्डल, कार्यपालिका, स्थानीय सरकारें तथा अन्य बहुत से निकाय ऐसा कोई कानून नहीं बना सकते जिससे मौलिक अधिकारों का उल्लंघन होता हो।
- **मौलिक अधिकारों की रक्षा के लिए संवैधानिक व्यवस्था**—भारतीय संविधान में मौलिक अधिकारों की रक्षा की व्यवस्था की गई है। अनुच्छेद 32 के अनुसार, नागरिकों को यह अधिकार दिया गया है कि अधिकारों के संरक्षण के लिए सर्वोच्च न्यायालय या उच्च न्यायालय की शरण ले सकते हैं। नागरिक अधिकारों के अतिक्रमण की दशा में न्यायालय समुचित आदेश या लेख, जिसके अंतर्गत बंदी प्रत्यक्षीकरण, परमादेश प्रतिषेध, अधिकार-पृच्छा और उत्प्रेषण लेख भी आते हैं, जारी कर सकता है। अनुच्छेद 226 उच्च न्यायालयों को भी मौलिक अधिकारों की रक्षा का अधिकार देता है।
- **मौलिक अधिकार अदालतों द्वारा लागू कराये जा सकते हैं**—संविधान हमें यह अधिकार देता है कि हम मौलिक अधिकार को लागू कराने के लिए उच्चतम न्यायालय अथवा उच्च न्यायालय की शरण ले सकें।

- **संविधान संशोधन करके मौलिक अधिकार सीमित किए जा सकते हैं**—गोलकनाथ मुकदमे में उच्चतम न्यायालय ने यह निर्णय दिया है कि संविधान में ऐसा कोई संशोधन नहीं किया जा सकता जिससे कि मौलिक अधिकारों में कमी या कटौती होती हो। किन्तु केशवानंद भारती मुकदमें में उच्चतम न्यायालय ने यह भी कहा कि संविधान में संशोधन करके मूल अधिकारों को सीमित किया जा सकता है। 1980 के मिनर्वा मिल्स केस में उच्चतम न्यायालय ने पुनः यह बात दोहराई।

मौलिक अधिकारों का महत्व

मौलिक अधिकारों का महत्त्व एवं उपयोगिता निम्नलिखित तर्कों से सिद्ध होती है:

- **स्वतंत्रता**—भारत की स्वतंत्रता को बनाए रखने के लिए मौलिक अधिकारों का संविधान में होना अनिवार्य था। ये मौलिक अधिकार भारतीय लोगों को स्वतंत्रता प्रदान करते हैं।
- **व्यक्तित्त्व का विकास**—मौलिक अधिकारों द्वारा प्रदान की गई सुविधाएँ भारतीय नागरिकों के व्यक्तित्त्व के विकास को विश्वसनीय बनाती हैं। इन मौलिक अधिकारों द्वारा भारतीय नागरिकों को अनेक प्रकार की स्वतंत्रताएँ दी गई हैं, ताकि वे अपने व्यक्तित्त्व का उचित विकास कर सकें।
- **निरंकुशता पर प्रतिबंध**—कोई भी सरकार, मौलिक अधिकारों के विरुद्ध कानून नहीं बना सकती। संविधान में यह स्पष्ट व्यवस्था है कि मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करने वाला कानून उस सीमा तक रद्द समझा जाएगा जिस सीमा तक वह मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करता है।
- **कानून का शासन**—कानून के शासन का अर्थ है कि कोई भी व्यक्ति या संस्था कानून का उल्लंघन नहीं कर सकती। मौलिक अधिकारों ने भारत में कानून का शासन स्थापित करने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है।
- **समानता**—मौलिक अधिकारों ने न केवल वैधानिक समानता बल्कि सामाजिक और राजनैतिक समानता भी स्थापित की है। संविधान के अनुच्छेद 17 में अस्पृश्यता को समाप्त किया गया है।
- **धर्मनिरपेक्ष राज्य**—भारत एक धर्म-निरपेक्ष राज्य है। मौलिक अधिकारों ने भारत को धर्मनिरपेक्ष राज्य बनाने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। अनुच्छेद 25 से 28 तक नागरिकों को धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार दिया गया है।
- **अल्पसंख्यकों के लिए पवित्र घोषणाएँ**—भारत में अनेक धार्मिक और भाषायी अल्पसंख्यक समुदाय रहते हैं। मौलिक अधिकारों द्वारा अल्पसंख्यकों को कुछ विशेष सांस्कृतिक और शैक्षणिक अधिकार दिए गए हैं। इन मौलिक अधिकारों द्वारा अल्पसंख्यकों को यह विश्वास दिलाया गया है कि सरकार उनके साथ किसी भी आधार पर कोई भेदभाव नहीं करेगी।
- **भारतीय लोकतंत्र का मूल आधार**—समानता, स्वतंत्रता और भ्रातृभाव लोकतंत्र के मूल आधार हैं। भारतीय संविधान में लिखित इन मौलिक अधिकारों से लोकतंत्र के मूल आधारों की स्पष्ट झलक मिलती है।
- **दलित वर्गों के लिए पवित्र घोषणाएँ**—मौलिक अधिकार विशेष तौर पर दलित वर्गों के लिए पवित्र घोषणा है। संविधान में समानता के अधिकार को अंकित करके व्यक्तियों के भीतर जाति, धर्म, नस्ल, जन्म के आधार पर भेदभाव को समाप्त करने का एक सशक्त यत्न किया गया है।

मूल अधिकारों की आलोचना

आलोचकों ने इस बात का उल्लेख किया है कि एक तरफ तो संविधान मूल अधिकारों को प्रदान करता है और दूसरी तरफ उन्हें छीन लेता है, जसपत राय कपूर इस संबंध में कहते हैं कि मूल अधिकारों के भाग को इस तरह कहा जाना चाहिए 'मूल अधिकारों की सीमाएं' या 'मूल अधिकार एवं उसमें निहित सीमाएं'। इसमें महत्त्वपूर्ण सामाजिक एवं आर्थिक अधिकारों की व्यवस्था नहीं है जैसे सामाजिक सुरक्षा का अधिकार, काम का अधिकार, रोजगार का अधिकार, विश्राम एवं सम्मान का अधिकार आदि। ये अधिकार उत्तर लोकतांत्रिक देशों के नागरिकों को प्राप्त हैं और भी समाजवादी संविधानों जैसे रूस एवं चीन में ऐसे अधिकारों की व्यवस्था है। इनकी व्याख्या स्पष्ट एवं धुंधली है। कई जुमले एवं शब्द जैसे 'सार्वजनिक आदेश', 'अल्पसंख्यक', 'उचित प्रतिबंध', 'सार्वजनिक हित' आदि सही से व्याख्यायित नहीं हैं। इन्हें समझाने के लिए जिस भाषा का इस्तेमाल किया गया है, वह एक आम आदमी के समझने के लिए काफी जटिल है। ऐसा आरोप भी लगाया जाता है कि संविधान को वकीलों द्वारा वकीलों के लिए बनाया गया है। सर आइवर जेनिंग्स ने भारतीय संविधान को 'वकीलों के लिए स्वर्ग' की संज्ञा दी है। इनमें व्यापकता एवं स्थायित्व का भाव नहीं है जैसा कि संसद इनमें कटौती कर सकती है या समाप्त कर सकती है। उदाहरण के लिए संपत्ति के मूल अधिकार का 1978 में समाप्त कर दिया गया जो संसद में बहुमत वाले राजनीतिज्ञों का एक हथियार जैसा बन गए। न्यायक्षेत्र को बनाया गया 'मूल ढांचे का सिद्धांत' जिसमें मूल अधिकारों में कटौती या उनको समाप्त करने की सीमाएं केवल संसद में निहित हैं। इनके क्रियान्वयन का स्थगन राष्ट्रीय आपातकाल के समय (सिवा अनुच्छेद 20 और 21 के) इन अधिकारों पर एक और प्रतिबंध हैं। यह व्यवस्था लोकतांत्रिक व्यवस्था की जड़ों को काटती हैं। न्यायिक प्रक्रिया आम आदमी के लिए काफी खर्चीली है इसलिए आलोचक कहते हैं कि भारतीय समाज में अधिकार सुविधा मूलतः धनाढ्य लोगों के लिए है। आलोचकों का मत है कि निवारक हिरासत की व्यवस्था (अनुच्छेद 22) मूल अधिकारों के पाठ की खास भावना से दूर करती है। यह राज्य की विवेक शून्य शक्ति के जरिए व्यक्तिगत स्वतंत्रता को नकारती है। यह आलोचना को न्यायोचित ठहराती है कि भारत का संविधान व्यक्तिगत अधिकारों की तुलना में राज्य के अधिकारों की ज्यादा व्यवस्था करता है।

मूल अधिकारों का स्थगन

नागरिकों को संविधान द्वारा प्रदत्त किए गए मूल अधिकार निरपेक्ष एवं असीम नहीं हैं। विविध परिस्थितियों में अनेक आधारों पर इन पर युक्तियुक्त प्रतिबंध लगाए जा सकते हैं और इन्हें सीमित किया जा सकता है। अनेक परिस्थितियों में इनमें संशोधन किए जा सकते हैं तथा कई दशाओं में इनको स्थगित भी किया जा सकता है। निम्न परिस्थितियों में मूल अधिकारों का स्थगन किया जा सकता है:

1. **संकट काल में**—संकट काल में अर्थात् जब आपात की उद्घोषणा लागू हो, तब मूल अधिकारों को स्थगित कर दिया जाता है। बाहरी आक्रमण, युद्ध तथा आंतरिक अशांति के कारण जब राष्ट्रपति आपातकाल की उद्घोषणा करता है, तो उस दौरान अनुच्छेद 19 की मूलभूत छह स्वतंत्रताओं को राज्य द्वारा स्थगित किया जा सकता है। ऐसी आपात उद्घोषणा के दौरान राष्ट्रपति एक पृथक आदेश जारी कर न्यायालयों को भी भाग-3 में वर्णित मूल अधिकारों की रक्षा करने से रोक सकता है किंतु ऐसा आदेश यथाशीघ्र संसद के समक्ष रखा जाना चाहिए।
2. **सुरक्षा बलों आदि से संबंधित व्यक्तियों के बारे में**—संसद को सेना, सुरक्षा बलों, गुप्तचर सेवाओं आदि के सदस्यों के मूल अधिकारों के उपभोग को सीमित या समाप्त करने की शक्ति है। इन सेवाओं में अनुशासन बनाए रखने की दृष्टि से ऐसा किया जाना आवश्यक है।
3. **जहाँ फौजी कानून लागू हो**—उन क्षेत्रों में जहाँ फौजी कानून (मार्शल लॉ) लागू होता है, वहाँ के नागरिकों के मूल अधिकारों का अतिक्रमण करने की शक्ति संसद के पास है। संसद को यह अधिकार है कि सार्वजनिक सुरक्षा एवं शांति के लिए जिन क्षेत्रों में फौजी कानून लागू किया गया है, वहाँ फौजी अधिकारियों द्वारा किए गए किसी कार्य को मान्यता प्रदान कर उन्हें अदण्डनीय घोषित कर दे तथा नागरिकों के मूल अधिकार स्थगित कर दे।
4. **संविधान में संशोधन के द्वारा**—संसद को यह शक्ति प्राप्त है कि सार्वजनिक हित में मूल अधिकारों पर प्रतिबंध लगाकर उन्हें सीमित कर सकती है और उनमें अनुच्छेद 368 के अंतर्गत आवश्यक संशोधन भी कर सकती है। यद्यपि 1967 के गोलकनाथ मामले में उच्चतम न्यायालय ने मूल अधिकारों को असंशोधनीय माना था किंतु 1973 के केशवानंद भारती मामले में उच्चतम न्यायालय ने अपने पूर्व निर्णय को उलटते हुए कहा कि संसद मूल अधिकारों में संशोधन कर सकती है। संसद ने अपनी इस शक्ति का प्रयोग करते हुए 44वें संशोधन द्वारा सम्पत्ति के मूल अधिकार को समाप्त ही कर दिया। किन्तु संविधान संशोधन द्वारा संविधान के मूल ढाँचे में परिवर्तन नहीं किया जा सकता। उच्चतम न्यायालय के अनुसार 'कानून का शासन' मूल ढाँचे का अंग है। तद्नुसार अनुच्छेद 14 में दिये गये 'कानूनी समानता का अधिकार' तथा अनुच्छेद 32 में दिये गये 'संवैधानिक उपचारों का अधिकार' असंशोधनीय है।

सूचना का अधिकार (Right to Information)

- किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए सूचना के अधिकार का व्यापक महत्त्व है। विश्व के अनेक विकसित देशों में इस अधिकार को मान्यता दी गयी है। जर्मनी के संविधान में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के साथ-साथ नागरिकों को सूचना का अधिकार भी प्रदान किया गया है।
- सामान्यत: सूचना के अधिकार का अर्थ 'जानने के अधिकार' से लगाया जाता है। सूचना के अधिकार की सर्वप्रथम परिभाषा सम्भवत: संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा की गयी थी। 10 दिसंबर, 1948 को महासभा द्वारा जारी मानवाधिकारों की विश्व घोषणा में विभिन्न शीर्षकों के अंतर्गत एक सौ से अधिक मानवाधिकारों की सूची दी गयी है।
- इस सूची में नागरिक और राजनैतिक अधिकारों के अंतर्गत मद संख्या 19.2 में सूचना के अधिकार का उल्लेख किया गया है। इस अधिकार में भौगोलिक सीमाओं से परे मौखिक, लिखित, मुद्रित अथवा किसी भी अन्य माध्यम से सभी तरह की सूचनाओं और विचारों को चाहने, प्राप्त करने या प्रदत्त करने का अधिकार शामिल है। इसका स्पष्ट आशय यह है कि सूचना का अधिकार वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का एक भाग है जो सभी सदस्य देशों द्वारा स्वीकार्य हैं।
- अनुच्छेद 19(1) (क) में वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में सूचना का अधिकार भी शामिल है। सर्वोच्च न्यायालय ने अनेक न्यायिक निर्णयों में सूचना के अधिकार को अनुच्छेद 19(1) (क) को अन्तर्विष्ट माना है।

भारत में सूचना का अधिकार (Right to Information)

- सूचना के वैधानिक अधिकार के लिए भारत में 90 के दशक में गैर-सरकारी स्तर पर जनान्दोलन का संचालन किया गया। ब्रिटिश शासनकाल से चले आ रहे ऑफिशियल सीक्रेट्स एक्ट के तहत सरकारी कामकाज में गोपनयीता का विरोध करते हुए सरकारी कामकाज में पारदर्शिता, जवाबदेयता एवं उत्तरदायित्व के लिए सूचना के अधिकार की मांग की गयी।
- राजस्थान में सामाजिक कार्यकर्ता अरूणा रॉय के नेतृत्व में मजदूर किसान शक्ति संगठन, दिल्ली में परिवर्तन संस्था, महाराष्ट्र में सामाजिक कार्यकर्ता अन्ना हजारे, टिहरी गढ़वाल में चेतना आंदोलन आदि अनेक संगठनों, पत्रकारों, जागरूक नागरिकों द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर सूचना के अधिकार के लिए निरंतर मांग की गयी।

तालिका 5.4: सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005: एक नजर में

धारा	उपबंध	विषय-वस्तु
3	सूचना का अधिकार	सभी नागरिकों को ऐसा अधिकार प्राप्त होगा।
5	जन सूचना अधिकारी	केन्द्रीय जन सूचना अधिकारियों या राज्य जन सूचना अधिकारियों आदि के पदनाम।
6	सूचना प्राप्ति हेतु अनुरोध	शुल्क के साथ लिखित अनुरोध या इलेक्ट्रॉनिक विधि से अनुरोध।
7	अनुरोध का निपटारा	सामान्य मामलों में अनुरोध की तिथि से 30 दिनों के भीतर परंतु यदि सूचना किसी व्यक्ति के जीवन या स्वतंत्रता को प्रभावित करती है तो इसे 48 घंटे के भीतर प्राप्त किया जा सकता है।

(Continued)

धारा	उपबंध	विषय-वस्तु
8	सूचना जो उपलब्ध नहीं करायी जा सकती	भारत की संप्रभुता, सुरक्षा, राज्य के सामरिक, वैज्ञानिक और आर्थिक हित को प्रभावित करने वाली सूचना निषिद्ध सूचना, गुप्त सूचना प्राप्त नहीं की जा सकती।
9	अस्वीकृति का आधार	उस स्थिति में सूचना प्रदान नहीं की जाएगी यदि इससे किसी व्यक्ति के कॉपीराईट का उल्लंघन होता है।
11	तीसरे पक्ष के लिए सूचना	तीसरे पक्ष के अनुरोध पर विचार किया जाएगा।
12	केन्द्रीय और राज्य	केन्द्र और राज्य सरकारों को शक्तियां प्रदान की गईं।
13	सूचना आयोग का गठन	सूचना के अधिकार का क्रियान्वयन तथा संरक्षण।
19	अपील	निर्णय के लिए विनिर्दिष्ट समय के समाप्त होने के पश्चात् 30 दिनों के भीतर अथवा निर्णय की तारीख से 30 दिनों के भीतर, वरिष्ठ सूचना अधिकारी के समक्ष अपील की जा सकती है।
20	जुर्माना	केन्द्रीय सूचना आयोग या राज्य सूचना आयोग जैसा मामला भी हो में आवेदन प्राप्त किए जाने या सूचना प्रस्तुत किए जाने तक अधिकतम 25,000/—रुपए की सीमा के अध्याधीन 250/—रुपए प्रतिदिन के हिसाब से जुर्माना लगाया जाएगा। अगर तय सीमा अवधि में सूचना मुहैया नहीं करायी गयी।
23	क्षेत्राधिकार	न्यायालय को शिकायत, अपील आदि को निपटाने का क्षेत्राधिकार नहीं है।

- विभिन्न जागरूक संगठनों ने सूचना के अधिकार के लिए 'राष्ट्रीय अभियान' नामक संगठन भी गठित किया। राष्ट्रीय स्तर पर सूचना के अधिकार हेतु एक कारगर कानून की आवश्यकता 24 मई 1997 को मुख्यमंत्रियों के सम्मेलन में अनुभूत की गई थी। केन्द्र सरकार द्वारा एच.डी.शौरी के नेतृत्व में सूचना के अधिकार और सरकार में खुलापन तथा पारदर्शिता लाने के लिए गठित कार्यदल द्वारा प्रस्तुत मसौदे के आधार पर सूचना स्वतंत्रता विधेयक बना।
- राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन सरकार के समय दिसम्बर 2003 में संसद द्वारा सूचना स्वतंत्रता अधिनियम 2002 पारित किया गया किंतु यह अधिसूचित नहीं हो सका। दिसम्बर 2004 में संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन सरकार (यूपीए) द्वारा सूचना का अधिकार विधेयक 2004 प्रस्तुत किया गया। जिसे जून 2005 के आरंभ में राष्ट्रपति ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने बहुप्रतीक्षित सूचना के अधिकार विधेयक को अपनी मंजूरी दे दी और यह 12 अक्टूबर, 2005 से लागू हो गया। इस कानून में मानव अधिकारों के हनन के अलावा अन्य परिस्थितियों में केन्द्र सरकार की गुप्तचर एजेंसियों और सुरक्षा संगठनों को इसके दायरे से बाहर रखा गया है।
- इसमें विशेष परिस्थितियों में सूचना का खुलासा नहीं करने की छूट भी दी गयी है। इस कानून के दायरे में केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकारों के अलावा पंचायती राज संस्थाएं, स्थानीय निकाय और प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से सरकार से अनुदान प्राप्त करने वाले गैर-सरकारी संगठनों को शामिल किया गया है।
- किसी व्यक्ति को इस कानून के तहत लिखित रूप में या इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से केन्द्रीय जन सूचना अधिकारी अथवा राज्य जनसूचना अधिकार के यहाँ आवेदन पत्र के साथ अपेक्षित सूचना के लिए निर्धारित शुल्क (10 रुपये) भी जमा करना होगा।
- सूचना अधिकारी आवेदन मिलने के 30 दिन के अंदर सूचना उपलब्ध करायेगा अथवा धारा 8 व 9 में प्रदत्त किसी भी एक कारण के आधार पर आवेदन को अस्वीकार करेगा।
- यदि सूचना किसी व्यक्ति के जीवन से संबंधित होगी तो जन सूचना अधिकारी को इस संबंध में आवेदन मिलने पर 48 घंटे के भीतर अपेक्षित जानकारी देनी होगी।

मूल अधिकारों से संबंधित अनुच्छेद (अनुच्छेदः 12—35)

(Articles Related to Fundamental Rights)

अनुच्छेद—12

- संविधान का अनुच्छेद 12 राज्य शब्द की परिभाषा करता है। राज्य शब्द के तहत इस भाग में जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, राज्य के अंतर्गत भारत की सरकार और संसद तथा राज्यों में से प्रत्येक राज्य की सरकार और विधानमण्डल तथा भारत के राज्य क्षेत्र के भीतर या भारत सरकार के नियंत्रण के अधीन सभी स्थानीय और अन्य प्राधिकारी हैं। अर्थात् राज्य 'शब्द' के तहत निम्नलिखित सम्मिलित हैं:

1. भारत सरकार
2. संसद
3. राज्य सरकार
4. राज्य विधान मण्डल
5. सभी स्थानीय प्राधिकारी तथा
6. अन्य प्राधिकारी

- संसद कानून बनाकर अन्य प्राधिकारी को इसमें शामिल कर सकती है।
- प्राधिकारी से तात्पर्य किसी ऐसे व्यक्ति या निकाय से है जिन्हें विधि, उपविधि, आदेश या अधिसूचना आदि बनाने या जारी करने की और परिवर्तित करने की शक्ति है।
- स्थानीय प्राधिकारी के अंतर्गत नगरपालिकाएं, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड, ग्राम पंचायत, माइलिंग सेटलमेंट बोर्ड आदि संस्थाएं आती हैं।
- अन्य प्राधिकारी के अंतर्गत ऐसे प्राधिकारी या निकाय आते हैं जो संविधान या किसी अन्य संस्था द्वारा सृजित किए जाते हैं और जिन्हें विधि, उपविधि आदि बनाने की शक्ति प्राप्त होती है किंतु उनके द्वारा सम्प्रभु शक्ति का प्रयोग आवश्यक नहीं है।

अनुच्छेद—13

भारतीय संविधान का अनुच्छेद 13 मूल अधिकारों का प्रहरी है यही वह अनुच्छेद है जिस पर व्यक्तियों के मूल अधिकार का स्तंभ खड़ा हुआ है। अनुच्छेद 13(1) कहता है कि संविधान प्रवर्तित होने के पहले जो विधियाँ भारत में लागू थीं वह उस मात्रा तक शून्य मानी जाएंगी जिस मात्रा तक वह संविधान के भाग 3 के उपबंधों से असंगत होगी। अनुच्छेद 13(2) कहता है कि राज्य ऐसी कोई भी विधि नहीं बनाएगी जो भाग 3 के तहत प्राप्त अधिकारों को छीनती या अल्पीकरण करती है। ऐसी विधि उस मात्रा तक शून्य होगी जो संविधान के उल्लंघन में बनायी गयी है। यह पृथक्करणीयता के सिद्धांत से संबंधित है। अनुच्छेद 13(3) के तहत विधि का बल रखने वाला कोई अध्यादेश, आदेश, उपविधि, नियम उपनियम, अधिसूचना रूढ़ि तथा प्रथा इसके तहत आती है। इस प्रकार के विधियों द्वारा यदि मूलाधिकार का अतिक्रमण होता है तो उन्हें न्यायालय में चुनौती दी जा सकती है।

समता का अधिकार (अनुच्छेद—14 से 18) (Right to Equality)

उस में 'कानून के शासन' को परिभाषित किया गया है। अनुच्छेद—14 में यह उपबन्धित किया गया है कि 'भारत राज्य क्षेत्र में किसी व्यक्ति को विधि के समक्ष समता से अथवा विधियों के समान संरक्षण से राज्य द्वारा वंचित नहीं किया जाएगा'। इस में दो शब्दों का प्रयोग किया गया है विधि के समक्ष समता तथा विधियों के समान संरक्षण। विधि के समक्ष समता का तात्पर्य है कि किसी भी व्यक्ति को विशेषाधिकार प्रदान नहीं किया जाएगा, सभी व्यक्ति कानून की नजर में समान होंगे अर्थात् कानून सभी व्यक्तियों पर समान रूप से लागू होगा। विधि का समान संरक्षण का तात्पर्य है कि समान परिस्थिति वाले प्रत्येक व्यक्तियों के साथ समान व्यवहार करना। असमान परिस्थिति में असमान व्यवहार किया जा सकता है इसी कारण अपवाद दिखायी देता है, जैसे:

1. विदेशी कूटनीतिज्ञों को न्यायालय की अधिकारिता से मुक्ति प्राप्त है।
2. अनुच्छेद—361 के तहत राष्ट्रपति तथा राज्यपाल को विशेष अधिकार।
3. संसद/राज्य विधान मण्डल के सदस्यां को प्राप्ति विशेषाधिकार आदि।

वर्गीकरण के आधार—1. राज्य के पक्ष में विभेद। 2. भौगोलिक स्थिति के आधार पर। 3. कराधान विधियों के सम्बन्ध में। 4. एक व्यक्ति स्वयं एक वर्ग माना जा सकता है। 5. विशेष न्यायालय और विशेष प्रक्रिया व सम्बन्ध में। 6. प्रशासनिक अधिकारियों की विवेकाधीन शक्तियों के संदर्भ में।

अनुच्छेद—15

अनुच्छेद 15(1) के तहत राज्य किसी नागरिक के विरुद्ध केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्मस्थान या इनमें से किसी के आधार पर कोई विभेद नहीं करेगा। अनुच्छेद 15(2) के तहत कोई नागरिक केवल धर्म, मूलवंश जाति, लिंग, जन्मस्थान या इनमें से किसी के आधार पर—1. दुकानों, सार्वजनिक भोजनालयों, होटलों और सार्वजनिक मनोरंजन के स्थानों में प्रवेश या 2. पूर्णत: या अंशत: राज्यनिधि से पोषित या साधारण जनता के प्रयोग के लिए समर्पित कुओं, तालाबों, स्नानघरों, सड़कों और सार्वजनिक समागम के स्थानों के उपयोग के सम्बन्ध में किसी भी निर्भिकता, दायित्व, निर्बन्धन, या शत्रु के अधीन नहीं होगा। अनुच्छेद 15(3) के तहत राज्य को स्त्रियों और बालकों के लिए कोई विशेष उपबन्ध करने से निवारित (न रोकना) नहीं करेगी। अनुच्छेद 15(4) को प्रथम संविधान द्वारा संशोधन 1951 में जोड़ा गया, इसके तहत इस अनुच्छेद या अनुच्छेद 29 के खण्ड (2) की कोई बात राज्य को सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए नागरिकों के किन्हीं वर्गों की उन्नति के लिए या अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए कोई विशेष उपबन्ध करने से निवारित नहीं करेगा। अनुच्छेद 15(5) यह बिल हाल ही में पारित गए 93वें संविधान संशोधन (2006) से प्रेरित है जिसके द्वारा संविधान में अनुच्छेद 15(5) को सम्मिलित किया गया है। 93वां संविधान संशोधन राज्यों को सरकारी तथा सरकार द्वारा अनुदान प्राप्त शिक्षण संस्थानों (निजी संस्थान भी) में आरक्षण के लिए विशेष प्रावधान बनाने की शक्ति प्रदान करता है। अल्पसंख्यकों के शिक्षण संस्थान इसमें सम्मिलित नहीं है।

अनुच्छेद—16

अनुच्छेद 16 के तहत लोक नियोजन के विषय में अवसर की समता-इस अनुच्छेद में उपबन्ध किया गया है कि राज्य के तहत किसी पद पर नियोजन या नियुक्ति के संदर्भ में सभी नागरिकों को समान अवसर दिया जायेगा तथा इनको धर्म, मूलवंश, लिंग, जन्मस्थान, निवास या इसमें से अन्य किसी आधार पर न तो किसी नागरिक को अयोग्य समझा जाएगा और न ही उनमें विभेद किया जाएगा।

- अनुच्छेद 16 के कुछ अपवाद स्वीकार किये गये हैं जो निम्नलिखित हैं:

1. संसद विधि द्वारा संघ के राज्यों को अधिकार दे सकती है कि वे अपने अधीन किसी नियोजन (पद) के हेतु उस राज्य के निवास विषयक योग्यता की अपेक्षा करें। जैसे आन्ध प्रदेश, उत्तराखण्ड में समूह 'घ' भर्ती के संदर्भ में किया गया है।
2. अनुच्छेद 16(3) के तहत वर्तमान समय में सिर्फ जम्मू-कश्मीर राज्य के सम्बंध में उपबंध प्रवर्तित है जो कि अनुच्छेद 370 के तहत सरकारी नौकरियों में निवास सम्बन्धी विषयक अपेक्षा की जा सकती है।
3. अनुच्छेद 16(4) के अनुसार राज्य पिछड़े हुए नागरिकों के ऐसे किसी वर्ग के पक्ष में जिनका प्रतिनिधित्व राज्य के विचार में राज्य तहत के सेवाओं में पर्याप्त नहीं है नियुक्तियों या पदों के आरक्षण के हेतु विधि बना सकती है (पिछड़े वर्गों को सरकारी नौकरियों में आरक्षण)।
4. अनुच्छेद 16(5) के तहत् धार्मिक संस्थाओं मे धर्म के आधार पर नियुक्ति किया जा सकता है।

अनुच्छेद—(17)

अस्पृश्यता का उन्मूलन किया जा चुका है और उसका किसी भी रूप में आचरण निषिद्ध है।

- राज्य तथा व्यक्ति दोनों किसी भी रूप में अस्पृश्यता नहीं करेंगे। 'अस्पृश्यता' से उपजी किसी भी अयोग्यता को लागू करना अपराध होगा, जो विधि के अनुसार दण्डनीय होगा। इस अनुच्छेद के तहत संविधान स्वयं किसी दण्ड का विधान नहीं करता है। बल्कि संसद/

राज्य विधान मण्डल विधि बनाकर इसे लागू करेगी। सांसद ने अस्पृश्यता अधिनियम, 1955 को इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए पारित किया। जो अस्पृश्यता के आचरण के लिए दण्ड का विधान करता है। अस्पृश्यता कानून को अधिक कठोर बनाने के लिए इस अधिनियम को 'अस्पृश्यता (अपराध) संशोधन अधिनियम, 1976' के द्वारा संशोधित कर दिया गया। मूल अधिनियम का नाम बदलकर 'नागरिक अधिकार (संरक्षण) अधिनियम, 1976' रखा गया। संविधान में अस्पृश्यता को परिभाषित नहीं किया गया है बल्कि उच्चतम न्यायालय ने देवराजी बनाम पदमन्ना (1958) वाद मतें इसे परिभाषित किया है।

अनुच्छेद—18

उपाधियों का उन्मूलन—भारतीय संविधान का अनुच्छेद 18 उपाधियों और उपहारों के उन्मूलन को उपबन्धित करता है। इस अनुच्छेद के अनुसार—1. सेना या विद्या सम्बन्धी उपाधि के सिवाय, अन्य कोई भी उपाधि राज्य द्वारा प्रदान नहीं की जाएगी। 2. भारत का कोई भी नागरिक किसी विदेशी राज्य से कोई उपाधि स्वीकार नहीं करेगा। 3. कोई भी व्यक्ति, जो भारत का नागरिक नहीं है, राज्य के अधीन लाभ या विश्वास के किसी पद को धारण करते हुए किसी विदेशी राज्य से कोई उपाधि, राष्ट्रपति की सम्पत्ति के बिना स्वीकार नहीं करेगा। 4. राज्य के अधीन लाभ या विश्वास का कोई पद धारण करते हुए कोई भी व्यक्ति राष्ट्रपति की सम्पत्ति के बिना, विदेशी राज्य से या उसके अधिन किसी भी रूप में कोई भेंट, उपलब्धि, या पद स्वीकार नहीं करेगा।

अत: यह अनुच्छेद स्पष्ट करता है कि कोई भी उपाधि बिना राष्ट्रपति की स्वीकृति के प्राप्त नहीं की जा सकेगी। भारत सरकार स्वयं भी अपने नागरिकों को सम्मानित करने के लिए 'भारत रत्न', 'पद्म विभूषण' आदि की उपाधियाँ प्रदान करती है, किंतु सेना सम्बन्धी उपाधि तथा विद्या सम्बन्धी उपाधि प्राप्त नहीं की जा सकती है। विदेशों से भी कोई उपाधि नहीं प्राप्त की जा सकती। सरकारी कर्मचारियों को भी इस बात के लिए उपबन्धित किया गया है कि वे अपने पद पर रहते समय कोई उपाधि, भेंट, उपलब्धि या पद ग्रहण नहीं कर सकते। किंतु राष्ट्रपति की स्वीकृति से उन्हें ऐसी उपाधि भेंट पद या उपलब्धि दी जा सकती है।

- जनवरी 1954 में राष्ट्रपति की दी अधिसूचना द्वारा इन राष्ट्रीय सम्मानों का औपचारिक रूप से प्रारंभ हुआ। लेकिन 1977 में जनता पार्टी ने इस पर रोक लगा दी तथा सुप्रीम कोर्ट ने इस रोक को हटा दिया और पुन: 1980 से इसे शुरू कर दिया गया।

स्वतंत्रता का अधिकार (अनुच्छेद—19 से 22)

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19 से 22 तक में स्वतंत्रता के अधिकार को उपबन्धित किया गया है। व्यक्तिगत स्वतंत्रता मूल अधिकारों में सर्वोच्च स्थान रखती है। अनुच्छेद 19 में भारत के 'सभी नागरिकों' को निम्नलिखित स्वतंत्रताएँ प्रदान की गई हैं:

भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, सभा करने की स्वतंत्रता, संघ बनाने की स्वतंत्रता, भ्रमण की स्वतंत्रता।

आवास की स्वतंत्रता, सम्पत्ति अर्जन, धारण, धारण और व्ययन की स्वतंत्रता (इसे 44वें संविधान संशोधन कर कानूनी अधिकार बना दिया गया है)। पेशा, व्यवसाय, वाणिज्य और व्यापार की स्वतंत्रता। व्यक्तिगत स्वतंत्रता सभी मौलिक अधिकारों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। अनुच्छेद 19 से अनुच्छेद 22 तक 4 अनुच्छेद मिलकर व्यक्तिगत स्वतंत्रता से संबंधत अध्याय निर्मित करते हैं, जो मौलिक अधिकारों के भाग का मेरूदण्ड है।

भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार—भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19(1) (क) में नागरिकों को भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार प्रदान किया गया है। इस अनुच्छेद के अनुसार सभी नागरिकों को भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार प्राप्त होगा। भाषण और अभिव्यक्ति का अर्थ होता है कि प्रत्येक नागरिक अपने विचार एवं मत को बिना किसी रोक-टोक के स्वतंत्रतापूर्वक प्रकट कर सकता है। इस प्रकार की अभिव्यक्ति शब्दों, लेखों और मुद्रण व चित्रों के द्वारा प्राप्त हो सकती है। वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में निम्नलिखित स्वतंत्रताएँ भी सम्मिलित हैं:

1. प्रेस की स्वतंत्रता,
2. विज्ञापन की स्वतंत्रता,
3. प्रदर्शन धरना और हड़ताल,
4. चलचित्र।

भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का निर्बन्धन
(Restriction of Freedom of Speech and Expression)

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19(2) में उल्लिखित किया गया है कि युक्तियुक्त आधारों पर भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर निर्बन्धन लगाया जा सकता है। ये निर्बन्धन अग्रलिखित आधार पर लगाये जा सकते हैं:

1. राज्य की सुरक्षा, 2. विदेशी राज्यों से मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों के हित में, 3. सार्वजनिक व्यवस्था, 4.शिष्टाचार या सदाचार के हित में, 5. न्यायालय-अवमानना, 6. मानहानि, 7. अपराध उद्दीपन के मामले, 8.भारत की संप्रभुता और अखण्डता।

सभा करने की स्वतंत्रता—भारतीय संविधान का अनुच्छेद 19(1)(ख) भारतीय नागरिकों को इस बात की स्वतंत्रता प्रदान करता है कि वे शांतिपूर्वक बिना हथियार के सभा कर सकते हैं। इस अधिकार में सार्वजनिक सम्मेलन, सभा और जूलूस आदि भी शामिल है। इस अधिकार के लिए यह आवश्यक है कि सभा कानूनी रूप से की जा रही है। भारतीय दण्ड संहिता की धारा 141 निम्नलिखित शर्तों के होने पर किसी सभा को गैरकानूनी और अवैध ठहराती है:

1. जबकि सभा का उद्देश्य किसी कानून या कानूनी आदेशिका के निष्पादन का विरोध करना है।
2. जबकि सभा का उद्देश्य शरारत या अतिचार करना है।
3. जबकि सभा का लक्ष्य किसी की सम्पत्ति पर बलपूर्वक कब्जा करने का हो।
4. सरकार के प्रति आपराधिक बल प्रयोग की धमकी देना।
5. गैरकानूनी रूप से किसी व्यक्ति से गैरकानूनी कार्य कराना।

यदि सभा का रूप हिंसात्मक हो जाता है या सभा से लोक व्यवस्था भंग होने की आशंका होती है तो ऐसी सभा गैरकानूनी होगी और उसे भंग कराया जा सकता है। सभा करने की स्वतंत्रता पर भी प्रतिबंध या निर्बन्धन लगाया जा सकता है। निम्नलिखित आधारों पर राज्य सरकार सभा एवं सम्मेलन करने की स्वतंत्रता पर प्रतिबन्ध लगा सकती है:

- अनुच्छेद 19(3) के तहत सभा करने की स्वतंत्रता पर दो प्रतिबंध लगाया गया है:
  1. भारत की प्रभुता और अखण्डता
  2. लोक व्यवस्था

संघ बनाने की स्वतंत्रता—भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19(1) के अंतर्गत भारतीय नागरिकों को संघ या संस्था बनाने की स्वतंत्रता प्रदान की गई है। संघ या संस्था बनाने की इस स्वतंत्रता में नागरिकों को यह भी अधिकार प्रदान किया है कि वे इस संस्था या संघ का संगठन और प्रबन्ध भी देखें। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19(4) के अंतर्गत संस्था या संघ बनाने के अधिकार पर राज्य सरकार को यह अधिकार प्रदान किया गया है कि वह जनहित में कानून बनाकर ऐसे अधिकार पर प्रतिबन्ध लगाये। भारत की संप्रभुता और अखण्डता के हितों की रक्षा के लिए संघ या संस्था बनाने की स्वतंत्रता पर निर्बन्धन लगाया जा सकता है। सार्वजनिक व्यवस्था को सुचारू बनाये रखने के लिए निर्बन्धन लगाया जा सकता है। सदाचार के हितों की रक्षा के लिए युक्तियुक्त प्रतिबन्ध लगाये जा सकते हैं।

भ्रमण की स्वतंत्रता—भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19(1)(घ) में भारतीय नागरिकों को समस्त भारत में स्वतंत्र रूप से निर्बाध भ्रमण करने की स्वतंत्रता प्रदान की गई है। इस अधिकार में नागरिकों को यह अधिकार दिया गया है कि वे भारत के किसी भी स्थान पर बेरोकटोक घूम सकते हैं। किंतु भ्रमण की स्वतंत्रता के अधिकार पर भी युक्तियुक्त निर्बन्धन लगाये जा सकते हैं। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19(5) में भ्रमण की स्वतंत्रता पर राज्य द्वारा निम्नलिखित प्रतिबन्ध लगाये जा सकते हैं—1. साधारण जनता के हित में युक्तियुक्त निर्बन्धन लगाये जा सकते हैं। 2. किसी अनुसूचित जाति, जनजाति के हितों की सुरक्षा के लिए ऐसे प्रतिबन्ध युक्तियुक्त होंगे।

आवास की स्वतंत्रता—भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19(1)(ङ) में भारतीय नागरिकों को समस्त भारत में समान रूप से किसी भी स्थान पर निवास करने की स्वतंत्रता का महत्त्वपूर्ण अधिकार प्रदान किया गया है, दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि भारत में सभी नागरिकों को यह अधिकार प्रदान किया गया है कि वे बिना किसी अधिकारी या राज्य की पूर्व अनुमति के किसी भी स्थान पर निवास कर सकते हैं। किंतु इस अधिकार पर भी युक्तियुक्त प्रतिबन्ध लगाया जा सकता है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19(5) के अंतर्गत आवास या निवास की स्वतंत्रता के इस अधिकार पर राज्य निम्नलिखित आधारों पर युक्तियुक्त निर्बन्धन लगा सकती है—1.जनहित में और 2. अनुसूचित जातियों के हितों की रक्षा के लिए ऐसा निर्बन्धन युक्तियुक्त होगा।

पेशा, व्यवसाय, वाणिज्य और व्यापार की स्वतंत्रता—भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19(1)(छ) में भारतीय नागरिकों को भारत मतें कोई भी पेशा, व्यवसाय, वाणिज्य और व्यापार की स्वतंत्रता प्रदान की गयी है। भारत में प्रदत्त यह अधिकार भी पूर्ण नहीं है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19(6) के अनुसार राज्य कानून बनाकर निम्नलिखित आधारों पर किसी भी व्यक्ति को पेशा, व्यवसाय, व्यापार या कारोबार करने या चलाने से रोक सकता है—1. साधारण जनता के हित में और विशेष रूप से, 2. विशेष प्रकार के जैसे तकनीकी व्यवसायों के लिए आवश्यक तकनीकी योग्यताएँ निर्धारित करके, या 3. राज्य द्वारा या राज्य के स्वामित्व या नियंत्रण के अधीन किसी निगम द्वारा किसी व्यापार, कारोबार या उद्योग का पूर्ण या आंशिक एकाधिकार ग्रहण करके।

निवारक निरोध कानून (Preventive Detention Laws)

केन्द्र सरकार द्वारा अब तक निम्नलिखित निवारक निरोध कानून लागू किए गए हैं:

- निवारक निरोध अधिनियम, 1950
- आंतरिक सुरक्षा अनुरक्षण, अधिनियम, 1971
- आवश्यक वस्तु का काला बाजारी निरोध एवं आपूर्ति संरक्षण अधिनियम, 1979
- विदेशी मुद्रा संरक्षण और तस्करी निवारण अधिनियम, 1974
- राष्ट्रीय सुरक्षा कानून (रासुका), 1980
- आतंकवाद तथा विध्वंसक गतिविधियां (निवारक) अधिनियम (टाडा), 1985.
- आतंकवाद निरोधक अधिनियम (पोटा), 2002
- गैर कानूनी गतिविधियाँ (निवरण) अधिनियम, 2004

आईपीसी की धाराओं में कार्रवाई

अभिव्यक्ति की आजादी के अधिकार 19(1)(ए) के दुरूपयोग की दशा में या भारतीय दण्ड संहिता (आईपीसी) की विभिन्न धाराओं में केस दर्ज हो सकता है। इसमें मानहानि (धारा 499), देशद्रोह (धारा 121, 124ए), अश्लील सामग्री प्रसारण (धारा 292) धाराएं शामिल हैं।

अनुच्छेद—20—कार्योत्तर विधियों से संरक्षण—किसी व्यक्ति को उसी विधि के तहत दण्डित किया जा सकता है जो उसके अपराध करने के समय में प्रभाव में रही हो। **दोहरे दण्ड से संरक्षण**—व्यक्ति को किसी एक अपराध के लिए दोहरा दण्ड नहीं दिया जा सकता है। **आत्म-अभिशंसन से संरक्षण**—व्यक्ति को अपने ही विरुद्ध गवाही देने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता है।

अनुच्छेद—21—जीवन में वैयक्तिक स्वतंत्रता—अनुच्छेद 21 जीवन एवं वैयक्तिक स्वतंत्रता की प्रत्याभूति प्रदान करता है। इसके अनुसार किसी व्यक्ति को उसके जीवन या वैयक्तिक स्वतंत्रता से कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित किया जाएगा। यह अधिकार नागरिकों एवं गैर-नागरिकों दोनों का प्राप्त है। ए.के. गोपालन के मामले (1950) में उच्चतम न्यायालय ने जीवन एवं वैयक्तिक स्वतंत्रता का

शाब्दिक अर्थ ही ग्रहण किया था, अर्थात् जीवन एवं वैयक्तिक स्वतंत्रता का अर्थ व्यक्ति के देह अथवा शरीर से संबंधित स्वतंत्रता के रूप में ही लिया गया था। किंतु 1978 के मेनका गाँधी मामले में अपने निर्णय के अंतर्गत न्यायालय ने 'जीवन एवं वैयक्तिक स्वतंत्रता' की व्याख्या अनुच्छेद 19 में वर्णित छह स्वतंत्रताओं, अन्य मूल अधिकारों एवं राज्य के कुछ नीति निदेशक तत्त्वों के प्रकाश में की है। इस निर्णय के अनुसार जीवन का अर्थ मात्र 'शारीरिक अस्तित्त्व' नहीं है बल्कि उसके आगे 'शोषणमुक्त मानवीय गरिमा' के साथ जीने से है। यह व्यापक अधिकार है जिसमें निम्न बातें शामिल हैं:

1. **बन्दीकृत व्यक्ति के अधिकार**—भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 में यह उपबन्धित किया गया है कि कोई व्यक्ति विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के सिवाय किसी प्रकार अपने जीवन और वैयक्तिक स्वतंत्रता से वंचित नहीं किया जाएगा।

   निम्न मूल अधिकारों को अनुच्छेद 21 के अंतर्गत समाहित किया गया है—एकान्तता का अधिकार मूल अधिकार में समाविष्ट है। मानव गरिमा के साथ जीने का अधिकार। प्रदूषण मुक्त जल एवं वायु के उपयोग का अधिकार। एकान्त कारावास के विरुद्ध संरक्षण का अधिकार। सार्वजनिक स्थानों पर धूम्रपान का निषेध। हथकड़ी लगाने के विरुद्ध संरक्षण। पुलिस अभिरक्षा में मृत्यु के विरुद्ध संरक्षण। बलात्कार से पीड़ित महिला का अंतरिम प्रतिकार पाने का अधिकार। विदेश यात्रा का अधिकार (मेनका गाँधी और सतवन्त सिंह बनाम पासपोर्ट अधिकारी)। जीविकोपार्जन का अधिकार। शिक्षा का अधिकार। आहार पाने का अधिकार। अनुच्छेद 21 के अंतर्गत जीने के अधिकार में मरने का अधिकार सम्मिलित नहीं है (ज्ञान बनाम पंजाब राज्य, 1996।) पर्यावरण मुक्त जल एवं वायु के उपभोग का अधिकार। नि:शुल्क विधिक सहायता का अधिकार। शीघ्र परीक्षण का अधिकार। चिकित्सा सहायता पाने का अधिकार। आश्रय का अधिकार। श्रम जीवी महिलाओं का यौन उत्पीड़न से संरक्षण (विशाखा बनाम राजस्थान राज्य)।

2. **सार्वजनिक उद्देश्य एक पूर्व शर्त**—सर्वोच्च न्यायालय ने 9 अगस्त 2011 को अपने एक दिए गए फैसले में कहा है कि संविधान के अनुच्छेद—300क के तहत किसी व्यक्ति को उसके संपत्ति से वंचित करने के लिए सार्वजनिक उद्देश्य एक पूर्व शर्त होना चाहिए। सार्वजनिक उद्देश्यों के लिए किसी व्यक्ति के संपत्ति अधिग्रहण अनेक संभावित घटनाओं को जन्म दे सकता है। जिनमें आजीविका का हनन जिससे अनुच्छेद—21 का उल्लेख होता है।

3. **सेक्शन—309 को अनुच्छेद—21 के तहत समाप्त करने की याचिका**—केन्द्र सरकार जल्द ही भारतीय अपराध संहिता की धारा, 309 जो कि आत्महत्या के प्रयास करने से संबंधित है, को खत्म कर सकती है। विधि आयोग की इस संस्तुति को आपराधिक संहिता से हटाने के लिए आवश्यक 25 राज्यों ने अपनी सहमति दे दी है। ऐसे मामलों में दुर्भाग्यशाली व्यक्ति को सद्भावना, प्यार, सही सलाह और उपयुक्त उपचार की आवश्यकता होती है और निश्चित तौर पर ऐसे व्यक्ति को जेल नहीं भेजा जाना चाहिए। दिल्ली हाईकोर्ट में एक गैर सरकारी संगठन ने संविधान के उपबंधों के विरुद्ध तथा संविधान के अनुच्छेद 21 के उल्लंघन के आधार पर इसे समाप्त करने के लिए जनहित याचिका दायर की है।

   सेक्शन—309 को हटाने से सार्वजनिक प्राधिकरण, राज्य या समाज आत्महत्या को रोकने के अपने उत्तरदायित्व से मुक्त नहीं हो जाते हैं। संविधान का अनुच्छेद—21 जो जीवन के अधिकार से संबंधित है, यह मरने का अधिकार प्रदान नहीं करता है क्योंकि इससे देश में आत्महत्या की दर बढ़ जायेगी। इसके अलावा जहां जीवन का अधिकार एक प्राकृतिक अधिकार है वहीं आत्महत्या, अप्राकृतिक तौर पर अपने जीवन को समाप्त कर देना है।

अनुच्छेद—21 के तहत भारतीय और गैर-नागरिक समान—न्यायालय का मानना है कि भारतीय संविधान के अनुच्छेद—21 (जीवन और स्वतंत्रता का अधिकार) के अंतर्गत भारतीय नागरिकों एवं गैर-नागरिकों को समान अधिकार प्राप्त है। दिल्ली के एक स्थानीय न्यायालय ने यह बात केन्द्र सरकार के उस आदेश को रद्द करते हुए कहा जिसमें एक तमिल शरणार्थी को वापस श्रीलंका भेजने का आदेश दिया गया था। यह शरणार्थी पिदले 20 वर्षों से भारत में रह रहा है। वर्तमान समय में शरणार्थी समस्या का समाधान फार्नर एक्ट-1946 के अनुसार किया जाता है। न्यायालय ने कहा कि जहां तक भारतीय संविधान के अनुच्छेद—21 का सवाल है, यह नागरिकों के साथ-साथ गैर-नागरिकों के साथ भी समान बर्ताव को सुनिश्चित करता है। एक ऐसे शरणार्थी को उसके जन्म स्थान वाले देश में भेजने का आदेश देना, जहाँ उसे सुनिश्चित तौर पर उत्पीड़न का डर है। फार्नर एक्ट-1946 कानून की प्राथमिक और सबसे बड़ी खामी यह है कि इसमें 'शरणार्थी' शब्द का जिक्र तक नहीं है और भारत में निवास कर रहे लोगों के लिए 'विदेशी' शब्द का इस्तेमाल किया गया है। इन सबके बावजूद वर्ल्ड रिफ्यूजी सर्वे-2007 के अनुसार, भारत में 435900 शरणार्थी निवास कर रहे थे। भारत आने वाले ज्यादातर शरणार्थी पड़ोसी देशों में व्याप्त आंतरिक या वाह्य अशांति, राजनीतिक उत्पीड़न या मानवाधिकारों के उल्लंघन होने के कारण आते हैं। वर्तमान समय में भारत में कई देशों के शरणार्थी रह रहे हैं। जैसे—चीन के तिब्बत इलाके से, नेपाल, श्रीलंका, म्यांमार, बांग्लादेश आदि।

शिक्षा का अधिकार (अनुच्छेद 21क)—सर्वोच्च न्यायालय ने मोहिनी जैन के मामले में शिक्षा के अधिकार को मूल अधिकार का दर्जा दिया। संविधान (86वाँ संशोधन) अधिनियम, 2002 के द्वारा अनुच्छेद 21(क) जोड़कर एक नया मूल अधिकार बनाया गया है। इसके द्वारा राज्य को यह कर्त्तव्य सौंपा गया है कि वह 6 से 14 वर्ष की आयु के सभी बालकों को नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करेगा। इस अधिकार की आपूर्ति के लिए राज्य समुचित शिक्षा समवर्ती विषय है इसलिए राज्य और संघ दोनों ही विधि बना सकते हैं। 1 अप्रैल 2010 से शिक्षा का अधिकार विधेयक-2008 को पूर्णत: लागू कर दिया गया है। विदेश

जाने का अधिकार—मेनका गाँधी बनाम भारत संघ (1978) के बाद में विदेश भ्रमण का अधिकार एक मूल अधिकार घोषित किया गया। कहा गया कि प्राण का अधिकार केवल भौतिक अस्तित्व तक ही सीमित नहीं है वरन् मानव गरिमा को बनाए रखते हुए जीने का अधिकार है। अत: दैहिक स्वतंत्रता में संचरण की स्वतंत्रता अर्थात् इच्छानुसार कभी भी तथा कहीं भी जाने की स्वतंत्रता शामिल है। एकान्तता के अधिकार राजगोपालन बनाम तमिलनाडु राज्य 1994, सुप्रीम कोर्ट। जीविकोपार्जन का अधिकार—नि:शुल्क विधिक सहायता। सड़क पर व्यापार करना—चिकित्सा सहायता पाने का अधिकार। शिक्षा पाने का अधिकार—आश्रय का अधिकार।

शिक्षा का अधिकार अधिनियम, संवैधानिक (Right to Education Act, Constitutional)

उच्चतम न्यायालय ने प्रमाती शैक्षिक और सांस्कृतिक ट्रस्ट और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य (2014) के मामले में न केवल बच्चों की नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा अधिनियम, 2009 को वैध एवं संवैधानिक घोषित की है बल्कि इस अधिनियम को पारित करने के लिए उत्प्रेरक संवैधानिक प्रावधानों अर्थात् अनुच्छेद 15(5) और अनुच्छेद 21ए, जिन्हें क्रमश: संविधान (93वां संशोधन) अधिनियम, 2005 एवं संविधान (86वां संशोधन) अधिनियम, 2002 के द्वारा जोड़ा गया था, को भी संवैधानिक माना है। किंतु न्यायालय ने अधिनियम के उस प्रावधान को असंवैधानिक घोषित कर दिया है, जो संविधान के अनुच्छेद 30(1) के अंतर्गत अल्पसंख्यक शिक्षण संस्थाओं के संवैधानिक अधिकारों को प्रभावित करता था। इसका आशय यह है कि शिक्षा का अधिकार अधनियम, 2009 का वह प्रावधान जो निर्धन एवं असहाय वर्ग के 25 प्रतिशत बच्चों को विद्यालय में आरक्षण दिए जाने का प्रबंध करता है, अल्पसंख्यक वर्ग के विद्यालयों पर लागू नहीं होगा। मुख्य न्यायाधीश न्यायमूर्ति आर.एम. लोढ़ा की अध्यक्षता वाली पांच-सदस्यीय पीठ ने 6 मई, 2014 को इस मामले में निम्नलिखित निर्णय दिया है—संविधान का अनुच्छेद 15(5) जिसे संविधान (93वें संशोधन) अधिनियम, 2005 के द्वारा जोड़ा गया है और जिसमें सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से समाज के पिछड़े अनुसूचित जाति या जनजाति के सदस्यों के 6 से 14 वर्ष के बच्चों को नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने के लिए राज्यों को कानून बनाने के लिए सशक्त किया गया है, संवैधानिक है, और इससे निजी शिक्षण संस्थाओं के किसी अधिकार का अनुच्छेद 19(1)(जी) के अंतर्गत उल्लंघन नहीं होता है। संविधान के अनुच्छेद 21-ए, जिसे संविधान (86वां संशोधन) अधिनियम, 2002 के द्वारा जोड़ा गया है जिसमें प्रावधान किया गया है कि 'राज्य, विधि के द्वारा जैसा कि वह निर्धारित करे 6 वर्ष से 14 वर्ष तक के बच्चों को नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करेगा', संविधान के आधारभूत ढांचे को नष्ट नहीं करता है और न ही यह देश के संविधान की पंथनिरपेक्षता की अवधारणा को प्रभावित करता है। बच्चों को नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा, अधिनियम, 2009 के प्रावधान वैध और संवैधानिक हैं और यह अनुच्छेद 14, 19(1)(जी) के अंतर्गत निजी शिक्षण संस्थाओं के किसी अधिकार का उल्लंघ नहीं करते हैं किंतु जहां तक इसके प्रावधान संविधान के अनुच्छेद 30(1) के अंतर्गत आने वाली अल्पसंख्यक शिक्षण संस्थाओं के प्रबंधन एवं प्रवेश संबंधी शिक्षण संसाओं के प्रबंधन एवं प्रवेश संबंधी नियमों को प्रभावित करते हैं, वे संविधान के अधिकारिता हैं, अर्थात् इसके प्रावधानों को, विशेषकर आरक्षण के प्रावधानों को उन पर थोपा नहीं जा सकता है। राजस्थान की गैर-सहायता प्राप्त निजी शिक्षण संस्थाओं की ओर से अनेक रिट याचिकाएं इस अधिनियम के उस प्रावधान को चुनौती देते हुए प्रस्तुत की गई थीं कि वर्ष 2009 के अधिनियम के द्वारा 25 प्रतिशत निर्धन छात्रों को प्रवेश देने के लिए उन्हें बाध्य किया जाना अनुच्छेद 19(1)(जी) के अंतर्गत प्रदत्त उनेकी शैक्षिक वृत्ति, उपजीविका, व्यापार या कारोबार करने की स्वतंत्रता के अधिकार का उल्लंघन करता है तथा यह भी कि अनुच्छेद 15(5) के द्वारा अल्पसंख्यकों को छूट प्रदान किए जाने से संविधान का आधारभूत ढांचा नष्ट होता है और इसकी पंथनिरपेक्षता की अवधारणा प्रभावित होती है।

संविधान का प्रावधान जो विवाद का कारण रहा

- **अनुच्छेद 15(5)**—इस अनुच्छेद की और अनुच्छेद 19(1)(जी) की कोई भी बात राज्य को नागरिकों के सामाजिक और शैक्षिक दृस्टि से पिछड़े वर्ग के लोगों के या अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के लोगों के उन्नयन के लिए विशेष प्रावधान करने के लिए, विशेषकर संविधान के अनुच्छेद 30(1) के अंतर्गत आने वाली शैक्षिक संस्थाओं से भिन्न निजी शैक्षिक संस्थाओं में, चाहे वे राज्य के द्वारा सहायता प्राप्त हों अथवा नहीं, प्रवेश से संबंधित विधि बनाने के द्वारा प्रावधान करने के लिए निवारित नहीं करेगी।
- **अनुच्छेद 21ए—शिक्षा का अधिकार**—'राज्य 6 वर्ष से 14 वर्ष से तक के बच्चों को, ऐसे तरीके से जैसा कि राज्य विधि के द्वारा नियत करे, नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करेगा'।
- **बच्चों को नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा अधिनियम, 2009**—यह अधिनियम 26 अगस्त, 2009 को राजपत्र में प्रकाशित किया गया। कुल 38 धाराओं में संकलित इस अधिनियम की धारा 4 देश के 6 से 14 वर्ष तक के बच्चों को पास के स्कूल में नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार प्रदान करती है, जिसके लिए राज्य, समुचित/स्थानीय प्राधिकारी/माता-पिता सभी के कर्त्तव्य नियत किए गए हैं। इस अधिनियम की धारा 12(1)(सी) के अनुसार, निजी स्कूलों में ऐसे बच्चों के प्रवेश के लिए सरकार प्रबंध कर सकती है, जो निर्धन एवं असहाय हैं। यह अधिनियम भी मोहिनी जैन एवं उन्नीकृष्णनन बनाम आंध्र प्रदेश राज्य (1993) 4SSC 645 के मामले में उच्चतम न्यायालय के द्वारा पारित किए गए निर्णय के अनुपालन में पारित किया गया। यद्यपि इसके पूर्व 86वां एवं 93वां संविधान संशोधन अधिनियम लाया गया।

अनुच्छेद 22—अनुच्छेद 22 में उन प्रक्रियात्मक शर्तों को उपबन्धित किया है, जिनमें विधानमण्डल किसी निश्चित प्रक्रिया को विहित करता है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 22(1) और (2) में किसी अपराध के सम्बन्ध में गिरफ्तार व्यक्तियों को निम्नलिखित अधिकार प्रदान किये गये

हैं—1. गिरफ्तारी के कारणों को शीघ्रातिशीघ्र बताये जाने का अधिकार। 2. अपनी पसन्द के वकील से परामर्श करने और बचाव करवाने का अधिकार। 3.गिरफ्तारी के बाद 24 घण्टों के अंदर किसी मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किये जाने का अधिकार। 4. 24 घण्टे से अधिक निरोध मजिस्ट्रेट के आदेश से ही हो सकता है। उपर्युक्त अधिकार यद्यपि सभी व्यक्तियों को प्रदान किया गया है। किंतु अनुच्छेद 22 का खण्ड (3) इसका अपवाद निरूपित करता है। इसके अनुसार अग्रांकित व्यक्तियों को इस अधिकार से वंचित किया गया है—1. शत्रु देश का निवासी। 2. कोई निवारक निरोध कानून के अधीन व्यक्ति। निवारक निरोध कानून किसी गैर-कानूनी कार्य को रोकने के लिए होता है, न कि किसी गैर कानूनी कार्य के लिए किसी व्यक्ति को दण्ड देने के लिए। उदाहरण के लिए आतंकवाद को रोकने के उद्देश्य से निर्मित कानून-आतंकवादी गतिविधि निरोधक अधिनियम (पोटा), आतंकवादी एवं विध्वंसक गतिविधि अवरोधक अधिनियम (टाडा) 1987, आंतरिक सुरक्षा व्यवस्था अधिनियम (मीसा) 1971, राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम 1983, तस्करी रोकने के उद्देश्य से निर्मित कानून, गुंडा संरक्षण एवं निरोधक अधिनियम 1974 आदि निवारक निरोध से संबंधित कानून जो समय-समय पर प्रचलित रहे हैं। निवारक नजरबंदी संबंधी कानून बनाने की शक्ति केन्द्र व राज्य दोनों को प्राप्त है। विश्व के अन्य देशों में केवल आपातकाल में निवारक निरोध की व्यवस्था लागू की जाती है, किंतु भारतीय संविधान आपात और शांति दोनों समय के लिए निवारक निरोध की व्यवस्था करता है।

संरक्षण—अनुच्छेद 22 के खण्ड 4 के खण्ड 7 के अंतर्गत व्यक्ति को कतिपय परिस्थितियों में निवारक नजरबंदी से संरक्षण प्रदान किया गया है। अनुच्छेद 22 के खण्ड (4) के अनुसार किसी संभावित अपराध को रोकने के लिए नजरबंद किए गए व्यक्ति को तीन माह से अधिक की अवधि के लिए नजरबंद नहीं किया जा सकता। तीन माह से अधिक नजरबंदी के लिए 'सलाहकार बोर्ड' (जो ऐसे व्यक्तियों से मिलकर गठित होगा, जो उच्च न्यायालय के न्यायाधीश हैं या रह चुके हैं या नियुक्त होने के योग्य हैं) की सहमति आवश्यक है। अनुच्छेद 22(5) के अंतर्गत ऐसे व्यक्ति को नजरबंदी के आधार जानने का अधिकार है तथा वह व्यक्ति नजरबंदी आदेश के विरुद्ध अभ्यावेदन कर सकता है। अनुच्छेद 22 का खण्ड (7) संसद को निवारक निरोध अर्थात् नजरबंदी का उपबंध करने वाला ऐसा कानून बनाने का अधिकार देता है, जिसमें यह निश्चित उल्लेख हो कि किसी व्यक्ति को किन परिस्थितियों में, किस वर्ग या वर्गों के मामलों में, अधिकाधिक कितनी अवधि के लिए नजरबंद किया जा सकता है। इसके द्वारा सलाहकार बोर्ड की स्थापना (22(7)(क)) और उसके द्वारा अपनाई जाने वाली प्रक्रिया (22(7)(ग)) का भी उपबंध निहित है। संसद द्वारा अपनी इस शक्ति के प्रयोग में निम्नलिखित अधिनियम पारित किये गये हैं। यथा:

1. **निवारक निरोध अधिनियम 1950 (Preventive detention Act)**—में संसद द्वारा पारित यह अधिनियम 31 दिसंबर, 1969 तक लागू रहा। इसके अंतगत नजरबन्दी की अवधि एक वर्ष थी। संविधान में निवारक निरोध का उल्लेख अनुच्छेद 22 के खंड 4 में किया गया है किन्तु इसकी व्याख्या नहीं की गई है।
2. **आंतरिक सुरक्षा व्यवस्था अधिनियम, 1971 (Maintenance of internal security act-MISA, 1971)**—निवारक निरोध अधिनियम के स्थान पर 7 मई, 1971 को यह अधिनियम राष्ट्रपति के अध्यादेश द्वारा लागू किया गया, जिसे बाद में (जून, 1971) कानूनी दर्जा प्रदान किया गया। इसके तहत किसी व्यक्ति को परामर्शदाता मण्डल के परामर्श के बिना आपातकाल में 21 माह तक नजरबन्द किया जा सकता था। 44वें संविधान संशोधन के कारण यह अधिनियम अप्रैल 1979 में स्वत: समाप्त हो गया।
3. **विदेशी मुद्रा संरक्षण और तस्करी निवारण अधिनियम 1974**—आर्थिक जगत में इसे राष्ट्रीय सुरक्षा कानून का दर्जा प्राप्त है। 19 दिसम्बर 1974 से लागू इस अधिनियम के तहत आरंभ में निरोध की अवधि एक वर्ष थी किंतु 13 जुलाई 1984 से उसे दो वर्ष कर दिया गया है।
4. **राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम 1980**—जन साधारण में 'रासुका' के नाम से चर्चित इस अधिनियम का जन्म 1980 में एक अध्यादेश द्वारा हुआ था। इसका उद्देश्य देश की एकता, अखण्डता और सम्प्रभुता को खतरा पैदा करने वाले या साम्प्रदायिकता अथवा जातीय दंगों को प्रेरित करने वाले व्यक्तियों को निरुद्ध करना था। 1981 में इसे कानूनी दर्जा प्रदान किया गया तथा जून 1984 में इसमें संशोधन कर, इसे और कठोर बना दिया गया।
5. **आतंकवाद एवं विध्वंसक गतिविधि (निरोध) अधिनियम, 1985 (टाडा)**—निवारक निरोध कानूनों में यह सबसे कठोर कानून था। देश में आतंकवाद एवं विध्वंसक गतिविधियों पर अंकुश लगाने के उद्देश्य से यह अधिनियम 1985 में लागू किया गया था। इस अधिनियम के अंतर्गत आतंकवादी गतिविधियों में संलिप्त किसी अभियुक्त को 180 दिनों (6 माह) तक पुलिस हिरासत में रखा जा सकता था तथा एक बार दण्डाधिकारी के समक्ष उपस्थित कर पुन: अगले 180 दिनों तक हिरासत में रखा जा सकता था। 23 मई, 1995 को इस कानून की अवधि समाप्त हो जाने के कारण यह कानून समाप्त हो गया।
6. **आतंकवाद निरोधी अधिनियम, 2002 (पोटा)**—देश में आतंकवाद पर अंकुश लगाने के उद्देश्य से 2 अप्रैल, 2002 को के 'टाडा' के स्थान पर इस नये आतंकवाद निरोधी अधिनियम 'पोटा' को लागू किया गया था। इसके अधीन किसी भी मामले में दर्जा प्राथमिकी की पुष्टि महानिदेशक एवं संबंधित समीक्षा समिति द्वारा क्रमश: 10 दिन एवं 1 माह के भीतर किया जाना आवश्यक था। साथ ही गिरफ्तार अभियुक्तों की सूचना तत्काल परिवार को देने और पुलिस हिरासत की अधिकतम अवधि 30 दिन निर्धारित थी। 21 सितम्बर, 2004 को केन्द्र सरकार द्वारा जारी अध्यादेश के जरिये इस अधिनियम को रद्द कर दिया गया। ज्ञातव्य है कि यह अधिनियम 16 अक्टूबर 2001 में लागू किया गया जिसके पश्चात इसे 26 मार्च, 2002 को संसद के संयुक्त अधिवेशन में पारित किया गया था।
7. **गैर कानूनी गतिविधियाँ (निवारण) अधिनियम, 2004**—यह कानून मूलत: 1967 ई. में बनाया गया था। जिसे 2004 में

पोटा के समाप्त हो जाने के पश्चात् संशोधन करके अध्यादेश द्वारा 21 सितम्बर 2004 को प्रभावी किया गया। इसमें राष्ट्र विरोधी गतिविधियों में शामिल लोगों के लिए मृत्युदण्ड तक का प्रावधान किया गया है।

मुम्बई आतंकी हमले (26 नवंबर, 2008) के पश्चात् ऐसी घटनाओं से सशक्त ढंग से निपटने हेतु 'राष्ट्रीय जांच एजेंसी' (एन.आई.ए.) विधेयक के साथ-साथ गैर.कानूनी गतिविधियाँ निवारक अधिनियम में भी संशोधन हेतु विधेयक प्रस्तु किया गया था। 31 दिसम्बर, 2008 को राष्ट्रपति के अनुमोदन के बाद यह कानून प्रभावी हो गया। ध्यातव्य है कि 'निवारक निरोध' विषय को संविधान की समवर्ती सूची में रखा गया है। अत: भारत में केन्द्र और राज्य दोनों को ही निवारक निरोध कानून बनाने का अधिकार प्राप्त है। 'महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश तथा जम्मू-कश्मीर आदि राज्यों ने पहले ही अपने लिए निवारक निरोध कानून बना रखा है।

शोषण के विरुद्ध अधिकार
(Right Against Exploitation)

अनुच्छेद—23 व 24 के अंतर्गत शोषण के विरुद्ध मूल अधिकार प्रदान किया गया है। अनुच्छेद 23 मानव-दुर्व्यापार, बलात्श्रम आदि पर प्रतिबंध लगाता है तथा अनुच्छेद 24 के अंतर्गत कारखानों आदि में बालकों में बालकों के नियोजन पर रोक लगाया गया है।

बलात्श्रम का प्रतिषेध (Prohibition of Forced Labour)— अनुच्छेद 23(1) के द्वारा मानव का दुर्व्यापार और बेगार तथा इसी प्रकार का अन्य बलात्श्रम प्रतिनिषिद्ध कर दिया गया है तथा इसका उल्लंघन घोषित किया गया है। ध्यातव्य है कि संविधान के अंतर्गत अस्पृश्यता के बाद दण्डनीय माना जाने वाला यह दूसरा कार्य है। अनुच्छेद 23 द्वारा प्रदत्त संरक्षण राज्य तथा व्यक्ति दोनों के विरुद्ध प्राप्त है। 'मानव दुर्व्यापार' का अर्थ अत्यन्त व्यापक है। न्यायालय द्वारा समय-समय पर निर्वाचित मानव दुर्व्यापार एवं बेगार शब्द में निम्नलिखित शामिल हैं। यथा—1. दासप्रथा, 2. बेगार अथवा बलात्श्रम, 3. मनुष्यों का वस्तुओं की भांति क्रय-विक्रय, 4. स्त्रियों एवं बच्चों का अनैतिक व्यापार तथा5. बंधुआ-मजदूरी आदि।

अफस्पा (AFSPA)

'अफस्पा' अर्थात् सशस्त्र सेना विशेषाधिकार अध्यादेश (Armed Forces Special Powers Act) असम एवं मणिपुर में सशस्त्र विद्रोह को दबाने के लिए अपनाया गया एक कानून है। यह कानून ब्रिटिश भारत में 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन को दबाने के लिए बनाये गये कानून का ही प्रतिकृत है। इसे सितम्बर 1957 में अधिनियमित एवं मई, 1958 से लागू किया गया। इसके अंतर्गत सुरक्षा बलों, जिनमें अर्ध-सैनिक बल भी शामिल हैं, को अधोलिखित विशिष्ट अधिकार प्रदान किये गये हैं। यथा:

1. बिना किसी पूर्व सूचना के प्रभावी क्षेत्र में प्रवेश करने, तलाशी लेने एवं गिरफ्तार करने का अधिकार।
2. कानून-व्यवस्था बनाए रखने के लिए आवश्यकता पड़ने पर गोली चलाने का अधिकार।
3. इसके अलावा विद्रोही अभियान के विरुद्ध सुरक्षा बलों द्वारा किये गये किसी भी तरह के मानवाधिकार उल्लंघन की स्थिति में उन पर मुकदमा चलाने हेतु केन्द्र सरकार की अनुमति लेने की आवश्यकता आदि विशेषाधिकारों से क्षेत्रीय निवासियों में काफी आक्रोश व्याप्त है। इस कानून के विरोध में चल रहे आंदोलनों के कारण इस अधिनियम की समीक्षा के लिए न्यायमूर्ति वी.पी. जीवन रेड्डी की अध्यक्षता में नवम्बर, 2004 में एक समिति गठित की गई थी। समिति ने अपना सुझाव जून, 2005 में प्रस्तुत कर दिया था। किंतु सरकार ने समिति के सुझाव का पालन करना आवश्यक नहीं समझा। ध्यातव्य है कि आफ्सपा के अंतर्गत किसी भी क्षेत्र को अशांत घोषित करने तथा वहां यह अधिनियम लागू का प्रावधान राज्य सरकारों के लिए था। परंतु, 1972 में एक संशोधन द्वारा इसे लागू करने का अधिकार केन्द्र सरकार (राज्यपाल केन्द्र सरकार का प्रतिनिधि होने के कारण इसे लागू करने का अधिकार रखता है। को प्राप्त हो गया। साथ ही, केन्द्र सरकार उसे कहीं भी लागू करने का अधिकार रखती है।

अत: उक्त प्रकार के कार्य अनुच्छेद—23(1) के द्वारा प्रतिनिषिद्ध हैं तथा उनका उल्लंघन अपराध है।

अनुच्छेद—23 द्वारा घोषित अपराध के लिए अनुच्छेद—35 के अंतर्गत संसद को दण्ड विहित करने के लिए विधि बनाने की शक्ति प्रदान की गयी है। संसद ने अपनी इस शक्ति के प्रयोग में 'बन्धुआ मजदूरी प्रणाली उन्मूलन अधिनियम 1976' तथा 'महिला एवं बाल अनैतिक व्यापार (निवारण) अधिनियम 1986' पारित किया है।

अनुच्छेद—23 का खण्ड (2), खण्ड (1) अपवाद है। इसके अंतर्गत राज्य को सार्वजनिक प्रयोजनों हेतु अनिवार्य सेवा लागू करने का अधिकार है, किंतु राज्य ऐसी सेवा लागू करते समय केवल धर्म मूलवंश जाति या वर्ग के अथवा इनमें से किसी आधार पर नागरिकों के मध्य भेदभाव नहीं करेगा।

दीना बनाम भारत संघ (1983) सर्वोच्च न्यायालय के मामले में यह निर्णय दिया गया कि कैदियों को अपने काम के लिए उचित मजदूरी पाने का हक है। उचित पारिश्रमिक बिना काम कराना बलात् श्रम है और इससे अनुच्छेद—23 का उल्लंघन होता है।

बालकों के नियोजन का प्रतिषेध
(Prohibition of Employment of Children)

अनुच्छेद 24 में 14 वर्ष से कम आयु के बालकों के कारखानों, खानों तथा अथवा अन्य किसी जोखिम पूर्ण कार्य में नियोजन का निषेध किया गया है। इसका उद्देश्य कम आयु के बालकों के स्वास्थ्य एवं जीवन की रक्षा करना तथा शोषण से बचाना है। ध्यातव्य है कि इस अनुच्छेद द्वारा अधिरोपित निषेध अत्यांतिक है, अर्थात् इसका कोई अपवाद नहीं है।

ज्ञातव्य है कि 10 अक्टूबर, 2006 को केन्द्र सरकार द्वारा—बालश्रम (प्रतिषेध एवं विनियमन) अधिनियम—1986 के तहत् एक अधिसूचना जारी कर घरों व होटलों में बालश्रम पर प्रतिबंध लगा दिया गया है। इस अधिनियम के अनुसार खतरनाक सूची में शामिल 13 व्यवसायों में से किसी व्यवसाय में किसी बालक (5 से 14 वर्ष) का नियोजन अपराध है। इसके लिए 3 माह से 1 वर्ष तक का कारावास या 10 हजार से 20 हजार तक का अर्थदण्ड या दोनों प्रकार के दण्ड का प्रावधान है।

धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार
(Right to Freedom of Religion)

भारतीय संविधान की उद्देशिका में समस्त नागिरकों को विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता प्राप्त कराने का संकल्प व्यक्त किया गया है। संविधान के भाग तीन, अनुच्छेद 25 से 28 के अंतर्गत इस संकल्प को मूर्तरूप दिया गया है। अनुच्छेद 25 से 28 सभी व्यक्तियों के लिए, चाहे वे विदेशी हों या भारतीय, धार्मिक स्वतंत्रता के अधिकार को प्रदान करता है। 42वें संविधान संशोधन द्वारा उद्देशिका में 'पंथनिरपेक्ष' शब्द जोड़कर इस बात को और स्पष्ट कर दिया गया है। पंथ निरपेक्षता से तात्पर्य है कि राज्य सभी धर्मों के प्रति तटस्थता और निष्पक्षता का व्यवहार करेगा। ज्ञातव्य है कि पंथनिरपेक्षता पर आधारित प्रथम प्रजातंत्र की स्थापना संयुक्त राज्य अमेरिका में हुई थी। संविधान में धार्मिक स्वतंत्रता शब्द का प्रयोग अत्यन्त व्यापक अर्थों में धार्मिक अल्पसंख्यकों की संतुष्टि को ध्यान में रखकर किया गया है।

अंतःकरण आदि की स्वतंत्रता
(Freedom of Conscience of Religion)

अनुच्छेद 25 का खण्ड(1) प्रत्येक व्यक्ति को अंत:करण की स्वतंत्रता और धर्म के अबाध रूप से मानने, आचरण करने तथा प्रचार करने का अधिकार प्रदान करता है। अंत:करण की स्वतंत्रता और धर्म के अबाध रूप से मानने, आचरण करने तथा प्रचार करने का अधिकार प्रदान करता है। अंत:करण की स्वतंत्रता से तात्पर्य व्यक्ति की आंतरिक स्वतंत्रता से है। जिसके तहत् वह अपनी इच्छानुसार अपने आराध्य के साथ सम्बन्ध स्थापित करता है। धर्म को मानने से तात्पर्य है, निर्बाध रूप से खुलकर अपने आस्था एवं विश्वास की घोषणा करना। धर्म के आचरण से अभिप्राय है अपने धर्म के जुड़े हुए कर्मकाण्ड करना, कर्त्तव्यों का पालन करना तथा अपने धार्मिक विश्वास को प्रकट करना। धर्म के प्रचार के अंतर्गत अपने धार्मिक विचार को दूसरों के समक्ष प्रकट करना तथा उसको मानने के लिए समझाना-बुझाना आता है। किंतु किसी व्यक्ति को लालच या दबाव के अधीन अपना धर्म परिवर्तन करने हेतु प्रेरित करना इसके अंतर्गत नहीं आता है। स्टैनी स्लाव बनाम मध्य प्रदेश के मामले में निर्णय दिया गया कि धर्म की स्वतंत्रता में दूसरों का धर्म परिवर्तन कराने की स्वतंत्रता शामिल नहीं है।

अन्य मूल अधिकारों की भांति धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार भी अत्यांतिक नहीं है। अनुच्छेद 25 का खण्ड (1) तथा (2) राज्य को उस पर निर्बन्धन लगाने की शक्ति प्रदान करते हैं।

अनुच्छेद 25(1) के अनुसार राज्य निम्न आधारों पर व्यक्ति की धार्मिक स्वतंत्रता पर विधि द्वारा निर्बन्धन आरोपित कर सकता है—यथा:

- लोक व्यवस्था
- सदाचार
- स्वास्थ्य

समय-समय पर सर्वोच्च न्यायालय ने उपरोक्त आरोपित निर्बन्धन पर अपने निर्णयों द्वारा प्रकाश डाला है। यथा:

1. गो-वध को इस्लाम की अनिवार्य प्रथा (बकरीद के अवसर पर) नहीं माना गया है। अत: लोक-व्यवस्था के संदर्भ में इसे विधि द्वारा प्रतिषेध किया जा सकता है।
2. प्रलोभन या बल पूर्वक धर्मांतरण पर प्रतिबंध।
3. मानव खोपड़ियों के साथ तांडव नृत्य या घातक हथियारों केसाथ सार्वजनिक जुलूस को सदाचार एवं लोकव्यवस्था के मद्देनजर प्रतिबंधित करना।
4. धर्मांतरण से सम्बद्ध जिन लौकिक गतिविधियों का विनियन राज्य कर सकता है, उनके सम्बन्ध में विधि के अनुरूप कार्यवाही की जानी चाहिए।

अनुच्छेद 25 (2) के अनुसार धार्मिक स्वतंत्रता के होते हुए भी राज्य निम्नलिखित के साम्बन्ध में विधि का निर्माण कर सकता है। यथा:

1. धार्मिक आचरण से सम्बद्ध किसी आर्थिक, वित्तीय, राजनैतिक या अन्य लौकिक क्रियाकलाप का विनियमन या निर्बन्धन करने वाली, या
2. सामाजिक कल्याण या सुधार के लिए उपबन्ध करने वाली अथवा
3. हिन्दूओं की धार्मिक संस्था को उनके सभी वर्गों के लिए खोलने का उपबन्ध करने वाली।

ध्यातव्य है कि यहाँ 'हिन्दू' शब्द के अंतर्गत बौद्ध, जैन तथा सिक्ख धर्म को मानने वाले लोग भी आते हैं। उपरोक्त अनुच्छेद के अंतर्गत कृपाण धारण करना और उसे लेकर चलना सिक्ख धर्म के मानने का अभिन्न अंग है।

धार्मिक कार्यों के प्रबंधन की स्वतंत्रता
(Freedom to Manage Religious Affairs)

अनुच्छेद—26 के अंतर्गत धार्मिक कार्यों की प्रबन्धन की स्वतंत्रता दी गयी है। यह स्वतंत्रता व्यक्तियों को नहीं बल्कि धार्मिक सम्प्रदायों को दी गयी है। धार्मिक सम्प्रदाय किसी विशेष धर्म में विश्वास करने वाले व्यक्तियों का एक ऐसा समूह है जो एक विशिष्ट नाम से संगठित है—यथा—रामकृष्ण मिशन। अनुच्छेद 26 के अनुसार—प्रत्येक धार्मिक सम्प्रदाय या उसके अनुभाग को निम्नलिखित अधिकार प्राप्त हैं:

1. धार्मिक प्रयोजन के लिए संस्थाओं की स्थापना और पोषण का।
2. अपने धर्म विषयक कार्यों के प्रबन्धन का।
3. जंगम और स्थावर सम्पति के अर्जन और स्वामित्व का।
4. जंगम और स्थावर समिति का विधि के अनुसार प्रशासन का।

किंतु राज्य उक्त अधिकारों पर लोक व्यवस्था, सदाचार और स्वास्थ्य के आधार पर निर्बन्धन लगा सकता हैं।

ध्यातव्य है कि यह अधिकार सिर्फ व्यक्तियों द्वारा स्थापित संस्थाओं को प्राप्त है। यदि कोई संस्था संसद के अधिनियम द्वारा स्थापित की जाय तो उसे धार्मिक कार्यों में प्रबन्धन की स्वंतत्रता नहीं होगी यथा—अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय जो संसद के अधिनियम द्वारा स्थापित किया गया है, उसे धार्मिक कार्यों में प्रबन्धन की स्वततंत्रता प्राप्त नहीं है।

धार्मिक अभिवृद्धि हेतु कर से मुक्ति
(Freedom from Payment of Taxes for promotion of any Particular Religion)

अनुच्छेद—27 में यह प्रावधान है कि किसी भी व्यक्ति को ऐसा कर देने के लिए विवश नहीं किया जा सकता, जिसकी आय को किसी विशेष धर्म या धार्मिक सम्प्रदाय की अभिवृद्धि के लिए व्यय किया जाता है।

अर्थात् अनुच्छेद —27 कर लगाने का निषेध करता है न कि शुल्क लगाने का। कर बिना सेवा के एक अनिवार्य धन की वसूली है, जबकि शुल्क सेवा के बदले राज्य द्वारा वसूला जाने वाला धन है। अत: यदि राज्य किसी धार्मिक सम्प्रदाय के लिए कोई कार्य करता है तो उस कार्य के लिए उस धार्मिक सम्प्रदाय के लोगों से वह शुल्क वसूला सकता है।

शिक्षण संस्थाओं के बारे में स्वतंत्रता

अनुच्छेद—28 का खण्ड (1) राज्य निधि से पूर्णत: पोषित शिषण संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा दिये जाने का निषेध करता है। अनुच्छेद 28 (2)इसका अपवाद है। इसके अनुसार यदि कोई शिक्षण संस्था जिसकी स्थापना किसी ऐसे विन्यास या न्याय के अधीन हुई, जिसके तहत् उस संस्था में धार्मिक शिक्षा देना आवश्यक है, तो ऐसी संस्था में धार्मिक शिक्षा दी जा सकती है।

अनुच्छेद—28(3) में यह प्रावधान किया गया है कि किसी व्यक्ति को, राज्य से एक मान्यता प्राप्त या राज्य निधि से सहायता प्राप्त शिक्षण संस्थाओं में दी जाने वाली धार्मिक शिक्षा में भाग लेने अथवा उसमें की जाने वाली धार्मिक उपासना मे उपस्थित होने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता।

किंतु यदि उस व्यक्ति ने अथवा यह अवयस्क है तो उसके संरक्षक ने इसके लिए अपनी सहमति दी है तो उसे धार्मिक शिक्षा मे भाग लेने या धार्मिक उपासना में उपस्थित होने के लिए विवश किया जा सकता है।

संस्कृति और शिक्षा सम्बन्धी अधिकार
(Cultural and Educational Right)

भारत की सांस्कृतिक विविधता को संरक्षित करने के उद्देश्य से संविधान के अंतर्गत 'संस्कृति और शिक्षा सम्बन्धी अधिकार' को अनुच्छेद—29 व 30 के अंतर्गत पाँचवें मूल अधिकार के रूप में स्थान दिया गया है। जहाँ अनुच्छेद—29 के अंतर्गत अल्पसंख्यक वर्गों के हितों को संरक्षण प्रदान किया गया है, वहीं अनुच्छेद—30 अल्पसंख्यक वर्गों को शिक्षण संस्थाओं की स्थापना और प्रशासन का अधिकार प्रदान करता है।

अल्पसंख्यक वर्गों के हितों का संरक्षण
(Right to Conserve Interest of Minorities)

अनुच्छेद—29(1) के अनुसार—भारत के प्रत्येक नागरिक को जिसकी अपनी विशेष भाषा, लिपि या सांस्कृतिक है, उसे बनाये रखने का अधिकार होगा। भारत के सुदूर क्षेत्रों में ऐसी अनेक आदिवासी जनजातियाँ बसती हैं, जिनकी अपनी विशिष्ट भाषा, लिपि और संस्कृति है। इसकी सुरक्षा, भारत की सांस्कृतिक विविधता को बनाये रखने के लिए आवश्यक है। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए उक्त प्रावधान किया गया है। उल्लेखनीय है कि न्यायिक निर्णय के अनुसार भाषा, लिपि और संस्कृति को संरक्षित करने का अधिकार नागरिकों के सभी वर्गों (चाहे वे अल्पसंख्यक हैं या बहुसंख्यक) को प्राप्त है।

अनुच्छेद—29(2) शिक्षण संस्थाओं में प्रवेश के अधिकार के बारे में है। इसके अनुसार ऐसी किसी भी शिक्षण संस्था में जो राज्य द्वारा पोषित या राज्य निधि से सहायता प्राप्त है, किसी नागरिक के प्रवेश देने से केवल धर्म, जाति, मूलवंश, जाति, भाषा या इनमें से किसी आधार पर वंचित नहीं किया जा सकता।

शिक्षण संस्थाओं की स्थापना
(Right to Establish Educational Institutions)

अनुच्छेद—29, अल्पसंख्यकों को जहाँ अपनी भाषा लिपि तथा संस्कृति को संरक्षित करने का अधिकार प्रदान करता है। वहीं इस अधिकार के प्रयोग के लिए उन्हें अनुच्छेद 30(1) के अंतर्गत शिक्षण संस्थायें स्थापित करने का अधिकार दिया गया है। इसके अनुसार भाषा या धर्म पर आधारित सभी अल्पसंख्यक वर्गों को अपनी रूचि की शिक्षण संस्थाओं की स्थापना और प्रशासन का अधिकार होगा। सेन्ट जेवियर कॉलेज, अहमदाबाद बनाम गुजरात राज्य के वाद में कहा गया कि अल्पसंख्यक वर्ग को शिक्षण संस्था के प्रशासन के अधिकार में, प्रबंधन समिति के गठन का, शिक्षण के माध्यम को विनिश्चित करने का तथा शैक्षणिक व प्रशासनिक नीति के निर्धारण का अधिकार भी शामिल है। अनुच्छेद—30 (2) राज्य द्वारा शिक्षण संस्थाओं में विभेद का निषेध करता है। इसके अनुसार राज्य किसी शिक्षण संस्था को सहायता देने में इस आधार पर भेद-भाव नहीं करेगा कि वह किसी अल्पसंख्यक वर्ग के प्रबंधन में है।

ज्ञातव्य है कि अनुच्छेद 30(1), अनुच्छेद 29(2) के अधीन है। अत: राज्य पोषित या राज्य निधि से सहायता प्राप्त किसी अल्पसंख्यक शिक्षा संस्था में किसी नागरिक को प्रवेश देने से केवल धर्म, मूलवंश, जाति या भाषा के आधार पर मना नहीं किया जा सकता।

ध्यातव्य है कि अनुच्छेद—30 द्वारा प्रदत्त अधिकार नागरिक तथा गैर-नागरिक दोनों को प्राप्त है जबकि अनुच्छेद—29 द्वारा प्रदत्त अधिकार केवल नागरिकों को ही प्राप्त है।

भाग तीन के अपवाद

अनुच्छेद—33, संविधान के भाग तीन का अपवाद है। अनुच्छेद 13(2) में यह प्रावधान है कि राज्य कोई ऐसी विधि नहीं बनायेगा जो भाग—3 द्वारा प्रदत्त मूल अधिकारों को छीनती है या कम करती है, किंतु अनुच्छेद—33, संसद को यह शक्ति प्रदान करता है कि वह कुछ विशिष्ट वर्गों के सम्बन्ध में

विशिष्ट प्रयोजनों की पूर्ति हेतु अधिकारों को निर्बन्धित या निराकृत करने वाली विधि बना सकती है। इस प्रकार अनुच्छेद—33, अनुच्छेद—13(2) के प्रभाव से बाहर है। अनुच्छेद—33 के अनुसार संसद निम्नलिखित वर्गों के सम्बन्ध में, उनके कर्त्तव्यों के उचित पालन और उनमें अनुशासन सुनिश्चित करने के उद्देश्य से विधि द्वारा यह अवधारित कर सकेगी कि, भाग—3 द्वारा प्रदत्त किसी मूल अधिकार को किस सीमा तक निर्बन्धित या निराकृत किया जाय। यथा:

1. सशस्त्र बलों के सदस्यों, या
2. लोक व्यवस्था के दायित्वाधीन बल के सदस्यों या
3. आसूचना ब्यूरो या तत्सम्बन्धी किसी अन्य संगठन में नियोजित व्यक्तियों, या
4. उक्त बल, ब्यूरो या संगठन हेतु स्थापित दूर संचार प्रणाली में नियोजित व्यक्तियों के सम्बन्ध में।

ध्यातव्य है कि अनुच्छेद—33 के अंतर्गत केवल संसद को विधि बनाने की शक्ति दी गयी है राज्य विधानमण्डलों को नहीं।

जब सेना विधि (मार्शल लॉ) लागू हो

अनुच्छेद—34 भारत के किसी राज्य क्षेत्र में सेना विधि के लागू होने पर, संसद की विधि बनाने की शक्ति के सम्बन्ध में है। इसके अनुसार जब भारत के किसी भाग में सेना विधि लागू हो तथा किसी सरकारी कर्मचारी या प्राइवेट व्यक्ति ने 'व्यवस्था बनाये रखने के लिए कोई कार्य किया है, तो संसद विधि द्वारा उनकी क्षतिपूर्ति कर सकता है तथा इस दौरान ऐसे क्षेत्र में सेना विधि के अधीन पारित दण्डादेश, दिये गये दण्ड, आदेशित समपहरण या किये गये अन्य कार्य को विधिमान्य कर सकती है। संसद द्वारा इस हेतु निर्मित विधि को इस आधार पर न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकती है कि वह मूल अधिकारों का उल्लंघन करती है।

संसद की विधि बनाने की शक्ति

अनुच्छेद—35 के अंतर्गत संसद से यह अपेक्षा की गयी है कि वह उन कार्यों के लिए जिन्हें भाग—3 के अंतर्गत अपराध घोषित किया गया है (यथा—अनुच्छेद 17 व 23), दण्ड का प्रावधान करने के लिए विधि बनायेगी तथा यह स्पष्ट किया गया है कि अनुच्छेद—16(3), 32(3), 33 व 34 के अंतर्गत दिये गये विषयों पर और भाग तीन के अधीन घोषित अपराध हेतु दण्ड का प्रावधान करने के लिए 'विधि बनाने की शक्ति' सिर्फ संसद को होगी राज्य विधानमण्डलों को नहीं। इस प्रकार अनु-35 के तहत निर्दिष्ट विषयों के सम्बन्ध में, राज्यों की अधिकार पर रोक लगाते हुए सिर्फ संसद को विधि बनाने की शक्ति दी गई है।

संवैधानिक उपचारों का अधिकार (अनुच्छेद 32)

अनुच्छेद 32

संविधान में नागरिकों के न केवल मौलिक अधिकारों का वर्णन किया गया है बल्कि उन मौलिक अधिकारों की सुरक्षा की व्यवस्था भी की गयी है। डॉ. अम्बेडकर ने इस अनुच्छेद को संविधान की आत्मा कहा है। अधिकारों की रक्षा का भार सुप्रीम कोर्ट और हाई कोर्ट को सौंपा गया है। अनुच्छेद 32 द्वारा इन न्यायालयों को कुछ लेख अथवा आदेश जारी करने के अधिकार दिए गए हैं। अधिकारों की रक्षा करने के लिए न्यायालयों को निम्नलिखित आदेश जारी करने के अधिकार दिए गए हैं:

- **बंदी प्रत्यक्षीकरण (हैबियस कॉरपस) (Habeas Corpus)**—हैबियस कॉरपस का अर्थ है, 'शरीर को हमारे समक्ष पेश करो'। बंदी प्रत्यक्षीकरण का आदेश न्यायालयों की ओर से उस समय जारी किया जाता है जब किसी व्यक्ति को नजरबंद किया गया हो। जिस व्यक्ति को बंदी बनाया गया है वह स्वयं अथवा उसके संबंधी या मित्र या वकील न्यायालय से यह प्रार्थना करते हैं कि 'बंदी बनाये जाने का कारण अस्पष्ट और अनिश्चित है'। यदि न्यायालय यह समझे कि किसी व्यक्ति को अनुचित ढंग से बंदी बनाया गया है तो वह यह आदेश दे सकता है कि बंदी बनाये गये व्यक्ति की स्वतंत्रता तुरंत बहाल की जाये।
- **परमादेश (Mandamus)**—इसका अर्थ होता है 'हम आदेश देते हैं'। जब कोई व्यक्ति, संस्था, निगम अथवा न्यायालय अपने सार्वजनिक कर्त्तव्यों की पूर्ति न करे तो सुप्रीम कोर्ट या हाई कोर्ट यह आदेश दे सकता है कि कर्त्तव्यों की पूर्ति की जाये। सार्वजनिक कर्त्तव्यों की पूर्ति के लिए न्यायालय इस तरह के आदेश जारी करते हैं, निजी कर्त्तव्यों की पूर्ति के लिए नहीं।
- **प्रतिषेध (Prohibition)**—इसका अर्थ है 'मना करना'। यह आदेश केवल न्यायिक अधिकारियों के विरुद्ध ही जारी किए जा सकते हैं, कार्यपालिका के विरुद्ध नहीं। जब कोई न्यायालय अपने अधिकार क्षेत्र के बाहर जा रहा हो या फिर कोई ऐसा कार्य कर रहा जो उसके अधिकार क्षेत्र न हो तो उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालय उसे ऐसा करने से रोक सकते हैं।
- **अधिकार पृच्छा (Quo Warranto)**—इसका अर्थ है 'तुम्हें क्या हक है'? जब कोई व्यक्ति ऐसे पदाधिकारी के रूप में कार्य करने लगता है जिसके रूप में कार्य करने का उसे वैधानिक रूप से अधिकार नहीं है तो न्यायालय अधिकार पृच्छा के आदेश द्वारा उस व्यक्ति से पूछता है कि वह किस आधार पर इस पद पर कार्य कर रहा है और जब तक वह इस प्रश्न का संतोषजनक उत्तर नहीं देता, वह कार्य नहीं कर सकता।
- **उत्प्रेषण लेख (Writ of Certiorari or Induction Articles)**—इसका अर्थ है—'और अधिक सूचित करो'। इस लेख के द्वारा उच्च न्यायालय किसी निम्न न्यायालय को यह आदेश देता है कि किसी केस से संबंधित कागजात या उसमें जो निर्णय हुआ है उन सबको उसके पास भेज दिया जाय। ऐसा करने के दो उद्देश्य हैं:
  1. वह केस उस न्यायालय में न चलकर उच्च न्यायालय में चलाया जा सके।
  2. यदि न्यायालय द्वारा दिया गया निर्णय न्याय के विरुद्ध हो तो उस फैसले को रद्द करके उसके स्थान पर दूसरा निर्णय दिया जा सके।
- **अनुच्छेद 33**—के तहत संसद सशस्त्र बलों या पुलिस बलों के मूल अधिकारों को निलंबित कर सकती है।
- **अनुच्छेद 34**—के अनुसार यदि किसी क्षेत्र में सैनिक शासन प्रवृत्त है तो इस स्थिति में उस क्षेत्र के लोगों के मौलिक अधिकारों को निलंबित किया जा सकता है।
- **अनुच्छेद 35**—अनुच्छेद 33 और 34 के संदर्भ में कानून बनाने की शक्ति संसद को प्राप्त है, राज्य विधान मंडल को नहीं।

जनहित याचिका—जनहित याचिका एक ऐसा सार्वजनिक शक्तिशाली अस्त्र है जिसे भारत में विधायिका व कार्यपालिका के कानूनी दायित्वों को लागू करने के लिये न्यायपालिका ने प्राप्त किया है। इसका उद्देश्य न्याय देना तथा लोगों के हित के संवर्द्धन में सहायता करना है। इसकी व्याख्या एक ऐसी याचिका के रूप में की जा सकती है जिसका संबंध अधिकांश लोगों के हित-संरक्षण से है। आस्ट्रेलिया न्यायिक जनहित याचिका का जन्मदाता है। भारत में इसके जन्मदाता जस्टिस पी.एन. भगवती तथा उच्च न्यायालय को है। अपने अनेक आदेशों के माध्यम से सर्वोच्च न्यायालय ने जनहित याचिका से संबंधित नियमों को विकसित किया है। सार्वजनिक हित के लिये जागरूक कोई व्यक्ति या संस्था जनहित याचिका दायर कर सकता है। एक पोस्टकार्ड को भी रिट याचिका के रूप में माना जा सकता है। न्यायालय द्वारा दी गई राहत प्राय: राज्य को निर्देश या आदेश के रूप में होती है, जिसमें प्रभावित पक्षों का मुआवजा भी शामिल है।

जनहित याचिका के उद्देश्य:

1. इसने लोगों को उनके अधिकारों तथा उन्हें क्रियान्वित कराने के लिये न्यायपालिका के रूप में संस्थागत व्यवस्था के प्रति अत्यंत जागरूक बना दिया है। यह कहा जाता है कि जनहित याचिका ने न्यायपालिका का लोकतंत्रीकरण कर दिया है।
2. जनहित याचिका द्वारा सर्वोच्च न्यायालय ने अनुच्छेद—32 व अनुच्छेद—226 की उदार व्याख्या करते हुए मौलिक अधिकारों के क्षेत्र को अत्यंत व्यापक बना दिया है।
3. इसने कार्यपालिका तथा विधायिका को लोगों के प्रति अपने संवैधानिक दायित्वों के निर्वाह के लिये बाध्य किया है।
4. इसने लोगों को भ्रष्टाचार मुक्त प्रशासन तथा रहने योग्य पर्यावरण प्रदान करने का एक प्रयास किया है।

तालिका 5.5: मौलिक अधिकार: एक दृष्टि में

मूल अधिकार	प्रावधान	विशेष
1. समानता का अधिकार (अनु. 14 से 18 तक) *नोट*—अनु. 15 और 16 केवल नागरिकों के लिए।	अनु. 14 : विधि के समक्ष समानता। अनु. 15 : धर्म, मूल, वंश, जाति, लिंग या जन्म के आधार पर विभेद का प्रतिषेध। अनु. 16 : लोक नियोजन में अवसर की समानता। अनु. 17 : अस्पृश्यता का अंत। अनु. 18 : उपाधियों का अंत।	• **अनु. 15 के खंड-3 एवं खंड-4** मे कुछ विशिष्ट परिस्थितियों में **संविधान राज्य को संरक्षणात्मक भेदभाव करने की अनुमति देता है।** जैसे: अनु.15(4) सरकारी सेवाओं में अन्य पिछड़ी जातियों के लिए आरक्षण। • अस्पृश्यता का अंत करने के लिए कानून बनाने का **अधिकार संसद को अनु. 35 द्वारा मिला है।** जिसके तहत **1955 में 'अस्पृश्यता (अपराध) अधिनियम 1955' पारित किया गया।** 1976 में इसे संशोधित कर **'सिविल अधिकार संरक्षण अधिनियम 1955'** के रूप में प्रवृत्त किया गया।
2. स्वतंत्रता का अधिकार (अनु. 19 से 22 तक) *नोट*—अनु. 19 केवल नागरिकों के लिए।	अनु. 19 : स्वतंत्रताएं अनु. 20 : अपराधों के लिए दोषसिद्धि के संबंध में संरक्षण। अनु. 21 : प्राण एवं दैहिक स्वतंत्रता।	**86वें संशोधन अधिनियम, 2002** के द्वारा **अनु. 21(क) नये उपबंध में 6 से 14 आयु वर्ग के बालकों के लिए नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध कराने का प्रावधान है।**
3. शोषण के विरूद्ध अधिकार (अनु. 23 से 24 तक)	अनु. 23 : बलात् श्रम (बेगार) पर प्रतिबन्ध अनु. 24 : बालश्रम निषेध	अनु. 24 में 14 वर्ष से कम आयु के किसी बालक को कारखानों एवं खानों में काम कराना निषेध है।
4. धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार (अनु. 25 से 28 तक)	अनु. 25 : अन्त:करण की स्वतंत्रता अनु. 26 : धार्मिक कार्यों के प्रबंध की स्वतंत्रता अनु. 27 : शिक्षा संस्थानों में धार्मिक शिक्षा के बारे में स्वतंत्रता	
5. संस्कृति तथा शिक्षा संबंधी अधिकार (अनु. 29 से 30 तक) *नोट*—अनु. 29 एवं 30 केवल नागरिकों के लिए।	अनु. 29 : भाषा, लिपि और संस्कृति के संरक्षण का अधिकार अनु. 30 : अल्पसंख्यकों से	
6. संवैधानिक उपचारों का अधिकार (अनु. 32 में)	बंदी प्रत्यक्षीकरण, परमादेश अधिकार पृच्छा, प्रतिषेध, उत्प्रेषण जैसे रिट SC व HC द्वारा जारी किये जाते है।	संविधान के **भाग-3** में प्रत्याभूत मूल अधिकार का यदि राज्य द्वारा उल्लघंन किया जाता है तो **राज्य के विरूद्ध उपचार के लिए अनु. 32 में सुप्रीम कोर्ट में तथा अनु. 226 के अधीन हाई कोर्ट में रिट याचिका दायर करने का अधिकार नागरिक को प्राप्त है।**

अध्याय सार संग्रह

- सर्वप्रथम अमेरिका में मूल अधिकारों को पूर्ण संवैधानिक स्तर प्रदान किया गया है।
- सर्वप्रथम अमेरिका के सुप्रीम कोर्ट के चीफ जस्टिस द्वारा मारबरी बनाम मेडिसन (1803) के वाद में न्यायिक पुनर्विलोकन का सिद्धांत प्रतिपादित किया गया था।
- भारतीय संविधान के भाग—3 में अनुच्छेद 12.35 तक मूल अधिकारों का वर्णन किया गया है।
- विधि के शासन की स्थापना करना, संविधान में मूल अधिकारों का समावेश करने का एक उद्देश्य है।
- मूल अधिकारों के प्रयोग पर युक्तियुक्त निबन्धन लगाये जा सकते हैं तथा यह आन्तरिक अधिकार नहीं है।
- भारत में मौलिक अधिकारों को (गोलकनाथ मामले में श्री सुब्बाराव ने कहा था) नैसर्गिक और अप्रतिदेय अधिकार माना है। मेनका गाँधी-वाद में भी और गोलकनाथ वाद में भी व्यक्त मत की पुष्टि की गई। न्यायमूर्ति बेग ने कहा है कि मौलिक अधिकार ऐसे अधिकार हैं जो स्वयं संविधान में समाविष्ट हैं।
- मौलिक अधिकार न केवल संघ व राज्य सरकारों की शक्तियों पर ही प्रतिबंध लगाते हैं अपितु उनके माध्यम से प्रत्येक ऐसी संस्था, जिसको कानून बनाने का अधिकार है, पर भी प्रतिबंध लगाया जा सकता है।
- आस्ट्रेलिया जनहित याचिका का जन्मदाता है। जनहित याचिका ने न्यायपालिका का लोकतंत्रीकरण कर दिया है।
- उच्चतम न्यायालय ने अपने एक निर्णय (अप्रैल 2004) में यह व्यवस्था की है कि किसी फिल्म अथवा वृत्तिचित्र के मध्य में राष्ट्रगान आने से दर्शकों का खड़ा होना अनिवार्य नहीं है।
- स्वीडन विश्व का पहला ऐसा देश है जिसने अपने नागरिकों को 1766 में सूचना का अधिकार प्रदान किया। यहाँ सामान्य जन को सरकारी कागजात उपलब्ध होना अधिकार है तथा इसकी अनुपलब्धता अपवाद स्वरूप है।
- उच्चतम न्यायालय ने अपने एक फैसले में कहा था कि 'अधिकार ही मौलिक है, अधिकारों के प्रतिबंध मौलिक नहीं हो सकते'।
- जसवंत राय कपूर ने संविधान सभा में कहा था कि 'हमें मूल अधिकार वाले अध्याय का नाम मौलिक अधिकार का निरोध अथवा मौलिक अधिकार एवं उन पर निरोध रखना चाहिए'।
- संविधान के अनुच्छेद 22(3) में उल्लिखित है कि अनुच्छेद 22(1) और 22(2) में उपबन्धित अधिकार उस व्यक्ति को नहीं मिलते जो विदेशी शत्रु हैं या जो निवारक नजरबंदी के कानून के अनुसार गिरफ्तार किया गया हो।
- डी.डी. बसु के अनुसार, 'निवारक नजरबंदी का अर्थ है बिना मुकदमा चलाए किसी व्यक्ति की नजरबंदी। ऐसी परिस्थितियों में अधिकारियों के पास मिलने वाले सुबूत कानूनी अभियोग लाने या कानूनी सबूतों द्वारा दण्ड दिलाने के लिए काफी नहीं, फिर भी उसकी नजरबंदी के लिए काफी हो'।